Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

AYURVED SHIKSHA G.K.V.

९४२

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि
न लगायें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या ....   आगत संख्या..........

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित ३० वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए। अन्यथा ५० पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैद्य धर्मदत्त
स्मृति संग्रह

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

|| श्रीः ||

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयकृष्णदास आयुर्वेद ग्रन्थमाला

५१

आयुर्वेद शिक्षा

[द्वादश प्रकरणों में प्रतिपद्य आयुर्वेद शिक्षा का जीवनोपयोगी एवं प्रेरणाप्रद शिक्षासार]

लेखक

धर्मदत्त वैद्य

एम्. ए., बी. एस्-सी., एम्. एड्., डी. पी. एड्.

चौखम्भा ओरियन्टालिया

प्राच्यविद्या तथा दुर्लभ ग्रन्थों के प्रकाशक एवं विक्रेता

वाराणसी दिल्ली

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

॥ श्रीः ॥

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयकृष्णदास आयुर्वेद ग्रन्थमाला

५१

आयुर्वेद शिक्षा

[द्वादश प्रकरणों में प्रतिपद्य आयुर्वेद शिक्षा का जीवनोपयोगी एवं प्रेरणाप्रद शिक्षासार]

लेखक

धर्मदत्त वैद्य

एम्. ए., बी. एस्-सी., एम्. एड्., डी. पी. एड्.

चौखम्भा ओरियन्टालिया

प्राच्यविद्या तथा दुर्लभ ग्रन्थों के प्रकाशक एवं विक्रेता

वाराणसी दिल्ली

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशक
चौखम्भा ओरियन्टालिया
पो० आ० चौखम्भा, पो० बाक्स नं० ३२
गोकुल भवन, के. ३७/१०९, गोपाल मन्दिर लेन
वाराणसी–२२१००१ (भारत)
टेलीफोन : ६३३५४ टेलीग्राम : गोकुलोत्सव

शाखा—बंगलो रोड, ९ यू० बा० जवाहर नगर
दिल्ली—११०००७ फोन : २२१६१७

R
55
VA2-A

C चौखम्भा ओरियन्टालिया
संस्करण : प्रथम १९८२
मूल्य : रु० ६–५०

आयुर्वेद प्रवर्तक देवता
लेखक
रघुवीर शरण शर्मा
मूल्य रु० १२–००

अन्य प्राप्तिस्थान
चौखम्भा भारती अकादमी
आकर ग्रन्थों के प्रकाशक एवं वितरक
गोकुल भवन, के. ३७/१०९, गोपाल मन्दिर लेन
वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : ६३३५४

मुद्रक—श्रीगोकुल मुद्रणालय, वाराणसी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

JAIKRISHNADAS AYURVEDA SERIES
NO. 51
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ĀYURVEDA ŚIKṢĀ

[educating āyurveda]

(abstraction of useful and inspiring ayurveda education in 12 chapters)

वैद्य धर्मदत्त
स्मृति संग्रह
04648

By

DHARMA DUTTA VAIDYA

M. A., B. Sc., M. Ed., D. P. Ed.

R55,VAI-A
04648
पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

CHAUKHAMBHA ORIENTALIA

A House of Oriental and Antiquarian Books

VARANASI DELHI

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Publishers
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CHAUKHAMBHA ORIENTALIA
P. O. Chaukhambha, Post Box No. 32
Gokul Bhawan, K. 37/109, Gopal Mandir Lane
VARANASI-221001 (India)
Telephone : 63354 Telegram : Gokulotsav

Branch—Bungalow Road, 9 U. B. Jawahar Nagar
DELHI-110007 Phone : 221617

© *Chaukhambha Orientalia*
Edition : First 1982
Price : Rs. 6-50

D
२४८

Fruits and Vegetables
in Ancient India
By
P. V. Sharma
Rs. 35-00

Also can be had of :—
CHAUKHAMBHA BHARATI ACADEMY
Gokul Bhawan, K. 37/109
Gopal Mandir Lane
VARANASI-221001 (India)
Phone : 63354

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिका

आयुर्वेदोऽमृतानाम् (च. सू. २५)

ब्रह्मांड के नियामक तीन देवता कहे जाते हैं। वायु के विषय में कहा है–'स एव लोकानां प्रभवः, धाता सर्वतन्त्राणां विधाता, नियन्ता, विश्वकर्मा, सर्वगः, सर्वतन्त्राणां प्रविधाता' (च. सू. १२) अर्थात् वायु संसार की सब वस्तुओं की उत्पत्ति का कारण है। वायु को संसार का प्रधान देवता कहा है। दूसरा देवता अग्नि को कहा है। 'अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्ठो रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव' (उप.) अग्निदेव और सूर्यदेव को जगत् का निर्माता कहा है (सूर्य आत्मा जगत स्तस्थुषश्च, यजु. ७।४२)। तीसरा देवता सोम को कहा है। भगवान् स्वयं अपने श्रीमुख से कहते हैं—'पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः' (गी. अ. १५) अर्थात् मैं ही सोम के रूप में सब वनस्पतियों में बैठा हूँ और प्राणियों का पोषण करता हूँ। इस प्रकार संसार के देवता वायु अग्नि और सोम हैं। इन्द्र इन देवताओं का राजा है। (केन उपनिषद् में यह वर्णन आता है) इसी प्रकार शरीर में भी उसके नियन्ता संचालक तीन तत्व हैं जिनको वायु, देहाग्नि (पित्त) तथा कफ (या सोम) कहते हैं। इनका राजा या स्वामी जीवात्मा है उसे इन्द्र भी कहते हैं। वह तो जीवन दाता द्रष्टा और साक्षी मात्र है। शरीर का सारा काम तो ये ही सूक्ष्मातिसूक्ष्म तीन तत्व करते हैं। 'सर्वशरीर चेरास्तु वात पित्त श्लेष्माण' (च. सू. १२) अर्थात् ये तीन तत्व सर्वशरीर व्यापी हैं, एक-एक सेल में उपस्थित हैं। तीनों मूल रूप में सूक्ष्मातिसूक्ष्म हैं। जैसे जगत् में वायु, अग्नि और सोम देवता सूक्ष्म हैं वैसे शरीर में वायु, पित्त और कफ मूल रूप में सूक्ष्मातिसूक्ष्म है। इनको दिखाया नहीं जा सकता; इनके कामों को देखा जा सकता है। 'वायुर्वाय्वात्मा; पित्तमग्न्यात्मा, श्लेष्मा-सोमात्मा' (सु० अ० ४२) ऐसा कहा है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर का मूलतत्व वायु—

वायुतत्व के विषय में चरक ने कहा है—'वायुस्तन्त्रयन्त्रधरः' 'प्रवर्तकश्चेष्टानामुच्चावचानाम्' अर्थात् शरीररूपी मशीन का संचालक वायु है। 'सर्वा हि चेष्ठावातेन सप्राणः प्राणिनां स्मृतः' (सूत्र. १७ चरक) अर्थात् इस वायु को ही, जो शरीर का संचालक है, प्राण 'कहते हैं। वायुरायुर्वलं वायुः' (च. चि. २८) जब तक वायु ठीक है, आदमी जीता है। शरीर का जो बल है वह भी वायु के कारण है। वायु को हम शरीर की Potential energy, Electrical potential कहते हैं। इसे Dynamic energy भी कहते हैं। इसे जीवनीय शक्ति Bioelectricity भी कहते हैं। इसकी ठीक-ठीक रक्षा करने से आदमी चिरायु होता है। इसे ठीक रखने के लिये एक तो पोषक आहार–जो सुपच् भी हो–लेना चाहिए जो ताजा हो, स्निग्ध हो, बलवर्धक हो और निश्चित समय पर लिया गया हो। ('कालभोजनमारोग्यकराणाम्' च. सू. २५) ('क्षीरघृताभ्यासो रसायनानाम्'–चरक) पक्वाहार के अतिरिक्त कुछ अपक्वाहार भी लेना चाहिए ताकि विटामिन्स पर्याप्त मात्रा में मिल जायें। उदाहरणतः मौसमी, गाजर, बन्दगोभी, सन्तरा, टमाटर आदि का एक कप स्वरस रोज लेना भी आवश्यक है। इक्षुस्वरस या किसी फल का रस इसी प्रकार लाभदायक है। दूसरा—वायु तत्व की रक्षा के लिये घृत, तिल तेल, बादाम रोगन आदि किसी फैट का लेना आवश्यक है। सप्ताह में कम से कम तीन दिन तैलाभ्यंग करने से भी वायु प्रबल रहता है। सिर में, कान में, नाक में तेल के डालने से भी वायु ठीक रहता है। तीसरे—प्रातः खुली हवा में व्यायाम करने या दो मील भ्रमण करने या तीस-चालीस मिनट योगासन, जैसे–सूर्य नमस्कार आसन, मयूरासन, धनुरासन, सर्वांगासन, शीर्षासन आदि करने से भी शारीरिक व्यायाम हो जाता है। चौथे—सदा सीधा बैठने का अभ्यास करने तथा गहरा श्वास लेने से भी वायु प्रबल रहता है। पाँचवें—चित्त को सदा शान्त रखने, हर प्रकार के आवेश, वादविवाद, कलह, परेशानी से बचे रहने से; छटे—हर प्रकार के इनफैक्शन से बचने का यत्न करने से, सातवें—नशीली दवाइयों तथा तम्बाकू, मद्य तथा बासी भोजन से बचे रहने से; आठवें—रात को सात-आठ घंटे की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरी नींद के लेते रहने से; नौवें—शुक्रधातु की रक्षा करने से शरीर का वायु धातु स्वस्थ रहता है।

वायुरोग—

शरीर के प्राणतत्व की रक्षा न करने से या किसी रोग से ग्रस्त हो जाने से या वृद्धावस्था के कारण जब उसका ह्रास होता है तो शरीर में बल के स्थान निर्बलता, स्निग्धता के स्थान रूक्षता, उचित तापमान के स्थान तापमान में कुछ कमी, गुरुता के स्थान लघुता, स्थूलता के स्थान कुछ सूक्ष्मता, स्थिरता के स्थान चलता (Excitability), पिच्छिलता के स्थान विशदता के लक्षण आ जाते हैं अर्थात् चलता, अशान्ति, वेदना, निर्बलता, विषाद आदि के लक्षण हो जाते हैं तो इन सब रोगों को वायुरोग कहते हैं।

वायुरोग चिकित्सा—

वायुप्रधान रोगों में शरीर के भरण पोषण को बढ़ाने वाली सन्तर्पण-वृंहण गुण, आहार-विहार औषधियों का प्रयोग करना चाहिए। कुछ एक प्रधान औषधियों का यहाँ उल्लेख किया जाता है।

रस औषधियाँ—

बृहद्वातचिन्तामणि २ रत्ती दैनिक। चिन्तामणि चतुर्मुख १ रत्ती ३ बार। रसराज १ रत्ती १ बार। बसन्त-कुसुमाकर १ गोली १ बार। ताप्यादि लोह २ रत्ती २ बार। गंधक रसायन मिश्री के साथ आधा ग्राम २ बार। चतुर्भुज रस १ रत्ती १ बार। स्वर्ण युक्त लक्ष्मी विलास २ रत्ती २ बार। अभ्रकयुक्त लक्ष्मीविलास ४ रत्ती २ बार। प्रवाल पञ्चामृत २ रत्ती २ बार। समशर्करलोह १ ग्राम २ बार। बसन्त मालती २ रत्ती २ बार। कुमार कल्याण १ रत्ती २ बार। स्मृतिसागर रस १ रत्ती २ बार। योगेन्द्र रस १ रत्ती २ बार। पञ्चामृत लोह मंडूर ३ रत्ती २ बार। सूतशेखर २ रत्ती २ बार। समीर पन्नग १ रत्ती २ बार (प्रवांसे)

बटी—

आरोग्य वर्धनी २ गो० २ बार। चन्द्र प्रभाबटी २ गोली २ बार। अग्नितुंडीबटी २ रत्ती २ बार। ब्राह्मीबटी २ गोली २ बार। महायोग-राज २ गोली २ बार। समालियाबटी २ गो० २ बार। आरकंपौंड़ २ गोली २ बार। रितौनबटी २ गोली २ बार। स्पीमन २ गोली २ बार।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीरीफोर्टगोली २ गोली २ बार। चन्द्रोदय मकरध्वजबटी २ रत्ती १ बार। एकांगवीर २ गोली २ बार। त्रयादशांग गुग्गुलु २ गोली २ बार। फोर्टीज २ गोली २ बार ४–५ मास। सेक्सोटैक्स २ गो० २ बार। टैन्टैक्स २ गोली २ बार। अग्नितुंडी १–२ बार। संजीवनी १–२ बार।

चूर्ण—

अजमोदादि चूर्ण २ ग्राम २ बार। आमलकी रसायन मिश्री मिलाकर २ ग्राम २ बार। नवायस चूर्ण २ रत्ती २ बार। लशुनाष्टक २ ग्राम २ बार। वैश्वानर चूर्ण २ ग्राम २ बार। हिंगु आदि (हींग १, काला नमक २, सोंठ ४, हरड़ वढ़िया ८) २ ग्राम २ बार। हिंग्वष्टक घृत के साथ २ ग्राम २ बार। सारस्वत चूर्ण १ ग्राम २ बार। भास्कर लवण २ ग्राम २ बार। एरण्ड तेल भर्जित हरीतकी चूर्ण ३ ग्राम १ बार। हिंगु आदि चूर्ण (हींग १, चव्य २, कालानमक ३, सोंठ ४, पिप्पली ५, कालाजीरा ६, पुष्कर मूल ७) १ ग्राम २ बार। एल्बोसांग (डी शेन) चम्मच २ बार।

अवलेह—

च्यवनप्राश २ तोला २ बार। चित्रक हरीतकी १ तोला १ बार। दशमूलहरीतकी २ तोला १ बार। अगस्त्य हरीतकी १ तोला १ बार। भार्ङ्गीगुड १ तोला १ बार। मूसली पाक (मूसली दोनों, १ सेर चीनी, २½ सेर चासनी, गोखरु, तालमखाना, कौंच, शतावरी, लौंग, बादाम, पिस्ता, चिरौंजी, जायफल, इलायची छोटी, तगर २½ तोला प्रत्येक) कल्याणावलेह एक चम्मच १ बार। दिवालमुश्क १ ग्राम १ बार। द्राक्षावलेह (द्राक्षा १ सेर कल्क, घृत २० तोला में भूनें। चीनी २ सेर की चासनी में पकायें, जायफल, जावित्री, इलायची छोटी, वंशलोचन, त्रिजातक, कमलगट्टा १–१ तो०) १ तो० २ बार। हरिद्राखण्ड ½ तोला २ बार। गोक्षुराद्यवलेह (ग. नि.) १ तोला १ बार। खमीरा गावजवां अम्बरी जवाहरी २ ग्राम १ बार। योगी रसायन १ चमच १ बार।

अरिष्ट—

अश्वगंधारिष्ट, दशमूलारिष्ट, द्राक्षारिष्ट (आधा औंस २ बार)।

घृत—

फलघृत, महात्रिफलाघृत बाह्मीघृत, कुमार कल्याणघृत, पञ्चतिक्तघृत

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुग्गुलु, सोमराजीघृत, लघुनघृत (लशुन ६४ तोला, कण्टकारी ६४, वासा ६४ तोला, जल १२ सेर। काढ़ा। द्राक्षा १६ तोला घृत ६४ तोला, दूध गाय का ६४ तोला लशुनकल्क ४ तोला, वासापत्र ४ तोला घृत निर्माण करें) अर्जुन-घृत, अष्ट मंगल घृत।

क्वाथ—

पुनर्नवाष्टक, रास्नासप्तक, अर्जुन पक्वक्षीर, रसोनपक्वक्षीर—१–१ औंस १ बार।

तेल—

नारायण तेल, माषतेल, गन्धर्व हस्ततेल, बृहत्सैन्धवाद्रितेल १–१ चम्मच १ बार। सैन्धवादि तेल मालिश। वातारितेल (ग. नि.), दशांगतेल (ग. नि.) मालिश, विषगर्भ तेल मालिश। भृङ्गराज तेल (सिरपर), षड्-बिन्दु तैल (नस्ये)।

पित्ततत्व—

शरीर का दूसरा मूलतत्व अग्नि है। यह शरीर का सर्वप्रधान तत्व है। चरक ने (चि. १५) कहा है—'आयुर्वर्णौ बलं स्वास्थ्य मुत्साहोपचयौ प्रभा। औजस्तेजोऽग्नयः प्राणाश्चोक्ता देहाग्नि हेतुकाः। शान्तेऽग्नौ म्रियते, युक्ते चिरंजीवत्यनामयः'। अर्थात् शरीर के प्राण भी अग्निपर आश्रित हैं। अग्नि से जो एनर्जी पैदा होती है वह प्राणों को बल देती है। चरक ने फिर (सू. २७) कहा है—'बलमारोग्यमायुश्च पाणाश्चाग्नौ प्रतिष्टिताः'। इससे पता लगता है कि शरीर अग्नि पर ही खड़ा है। भगवान ने तो यहाँ तक कह दिया है (गीता १५) प्रभु—'वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देह माश्रितः' अर्थात् साक्षात् भगनान् अग्नि बनकर प्राणियों के देह में बैठे हैं। अतिभोजन, विकृत भोजन, विरुद्ध भोजन, अकाल भोजन, शीतभोजन करके अग्नि को मन्द करना भगवान का अपमान करना है। अतिगुरु, अतिस्निग्ध, अतिशीत आहार लेने, विश्राम-मय जीवन व्यतीत करने, शारीरिक श्रम या व्यायाम न करने, शरीर को अतिशीत होने देने से देहाग्नि मन्द होती है और देहाग्नि के मन्द होने के कारण जो रोग होते हैं उन्हें हम कफरोग कहते हैं। अग्नि और कफ दो विपरीत द्रव्य हैं। जब अग्नि मन्द होती है तो कफ वृद्धि लाजमी है। रोगों में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबसे अधिक रोग अग्नि की मन्दता से या कफ वृद्धि से होते हैं। आयुर्वेद में तो सभी रोगों को अग्नि की मन्दता से होने वाला कहा है। निदान में कहा है—'रोगाः सर्वेऽपि मन्दाग्नौ'। वाग्भट ने तो यहाँ तक कह दिया 'वाग्भटस्य प्रतिज्ञैयं न मन्दाग्नि विना रुजः'। चरक (सू. २७) ने कहा है—'बल मारोग्यमायुश्च प्राणाश्चाग्नौ प्रतिष्ठिताः'। चरक ने (चि. १३) कहा है—'अग्नि दोषान्मनुष्याणां रोग संघाः पृथग्विधाः' अग्नि दोष का अर्थ सबने अग्नि की मन्दता किया है। चरक ने कहा है—'अग्निर्मेनापगच्छेच्छरीरात्'। चरक ने फिर (चि. ५) कहा है—'शम प्रकोपौ दोषाणां सर्वेषामग्नि संश्रितौ'। अग्नि की मन्दता से सभी दोषों का प्रकोप होता है, अग्निकी प्रबलता से सभी दोष शान्त हो जाते हैं। प्रसिद्ध वाक्य है 'अग्नि मूलं बलं पुंसाम्' अग्नि पर ही शरीर का बल आश्रित है। अतः सभी कफ रोगों की चिकित्सा यही है कि आहार-विहार, औषध आदि से अग्नि को प्रबल किया जाय।

कफचिकित्सा—

लंघन से, अपतर्पण से या लघ्वाहार से उष्ण जल, उष्णपेयों, मधु तथा गोमूत्र से अर्थात् गोमूत्र पक्व हरीतकी चूर्ण, गोमूत्र पक्व मण्डूर से कफ रोगों को शान्त किया जाता है। शारीरिक श्रम से, भ्रमण से भी कफ रोग शान्त होते हैं। गर्म जल के विषय में कहा है—'कासश्वासज्वरहरं पथ्यमुष्णोदकंसदा भिनत्तिश्लेष्म संघातम् मारुत चापि कर्षति (धन्व. निघण्टु); मधु के विषय में कहा है—त्रिदोषघ्नं मधु प्रोक्तम् (यो. र.); सुश्रुत (सू. ४५) ने कहा है—'मधुरुक्षम् शीतमग्निदीपनम लघु पित्तश्लेष्म मेदो मेह हिक्काश्वास कासातिसार छर्दि तृष्णा कृमिविषप्रशमनम् कफघ्नश्च' तक्र भी कफहर आहार है। तक्र के लिये धन्वन्तरि निघण्टु ने कहा है—'तक्रं लघुकषायोष्णं दीपनं कफ वात जित्'। सुश्रुत ने कहा है—'तक्रमुष्णवीर्यं लघुरुक्षमग्निदीपनं, हृद्यं मूत्रकृच्छ्र स्नेहव्यापद् प्रशमनम्'; गोमूत्र के लिये राज निघण्टु ने कहा है—'गोमूत्रं कटु तिक्तोष्णं कफ वात हरं लघु। तक्र के लिये कहा है—'न तक्र सेवी व्यथते कदाचित्' कफ रोग में गोधूमयव भोजन करें। कफ प्रधान रोगों में प्रयुक्त होने वाली कुछ औषधियों का उल्लेख किया जाता है—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस—

कफ केतु १ रत्ती २ बार। आनन्द भैरव २ रत्ती २ बार। रामबाण १ रत्ती ३ बार। त्रिभुवन कीर्तिरस १ रत्ती २ बार। कासकुठार, श्वास कुठार २ रत्ती २ बार। प्रवाल पञ्चामृत २ रत्ती २ बार। रसपर्पटी, पञ्चामृतपर्पटी २–३ रत्ती। पञ्चामृतरस (भै. र. शोथे) १ रत्ती २ बार। मृत्युञ्जय १ गोली २ बार। सञ्जीवनी २ गोली २ बार।

बटी—

गोक्षुरादि गुग्गुलुबटी २ गोली २ बार। लवंगादिबटी (मुखे), खदिरादि (मुखे), सिस्टोन २ गोली २ बार। स्टोनोन २ गोली २ बार। नवक गुग्गुलुवटी (भै. र.) २ गोली २ बार। सप्तविंशतिक गुग्गुलु २ गोली २ बार। कैशौर गुग्गुलु १ गो० २ बार। अर्शोनावटी २ गो० २ बार (योगी)।

चूर्ण—

त्रिकटु, पञ्चकोल, त्वगेलापत्रनाग केसर (चतुर्जातक), भास्करलवण २–२ ग्राम २ बार। लवंग चतुत्सम (लौंग, जीरा, जायफल, सुहागा) ३ रत्ती मधु से। व्योषादिचूर्ण २ ग्राम २ बार। तालीशादि २ ग्राम २ बार। गंगाधर २ ग्राम २ बार। बालचातुर्भद्र २ रत्ती २ बार। सुदर्शन चूर्ण २ ग्राम २ बार। समशर्कर लोह १ ग्राम २ बार। लवंगादि चूर्ण २ ग्राम २ बार। गैसान्तक चूर्ण २ ग्राम २ बार। विरेचन चूर्ण (गंधक, मुलैठी, सौंफ ५–५, सनाय १५. मिश्री २० तोला) ४ माशा १ बार।

आसव—

दशमूलासव, पिप्पल्याद्यासव, पुष्करमूलासव, पुनर्नवासव, कर्पूरासव, कुमार्यासव, अमृतारिष्ट ½ औन्स २ बार।

अवलेह—

हरिद्राखण्ड १ तो० १ बार। सौभाग्य शुंठी ½ तो० २ बार। सुपारीपाक ½ तो० २ बार। भार्ङ्गीगुड १ तो० १ बार। मधुपिप्पली १ चम्मच २ बार।

क्वाथ—

वरुणादिक्वाथ। पुनर्नवाष्टक क्वाथ १–१ औं० २ बार। पिप्पल्यादि (भा० प्र०) १ औं० १ बार।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तैल—

कुष्ठकणासाधितं तैलं घृतं वा (क्षवथौ)

तीसरा—अग्नितत्व की वृद्धि से रोग होते हैं—

शरीर में कोई जीवाणु या 'वायरस' रक्त में प्रविष्ट हो जाये, जैसा संक्रमण से हो सकता है तो इस 'इन्फैक्शन' की निवृत्ति के लिये शरीर का पित्ततत्व प्रबल हो जाता है जिससे ज्वर हो जाता है। यह ज्वर आगन्तु जीवाणु से शरीर की रक्षा के लिये होता है। जब ज्वर होता है तो रक्त के अन्दर जो श्वेताणु शरीर के रक्षक हैं, उनकी संख्या बहुत बढ़ जाती है। इसी प्रकार बाहर से आये विरोधी द्रव्य या 'एन्टिजन' के प्रतिकूल रक्त में 'एन्टि बौडीज' की मत्रा बहुत बढ़ जाती है। ऐसी अवस्था में हमें उचित है, हम शरीर के बल की रक्षा करें ताकि वह विरोधी द्रव्य को नष्ट करने में समर्थ बने। एक तो रोगी को पूर्ण विश्राम देना चाहिए। दूसरा—उसे लघु सुपच आहार देना ही चाहिये। अर्थात् सूपयूष, फलरस द्राक्षापक्व गोक्षीर, देसी चाय आदि कुछ आहार देना चाहिए 'ज्वरितोऽन्न' मशनीयात्। यद्यप्यस्या-रुचिर्भवेत् (यो. र.), ज्वरितोऽन्नकाले अश्नीयादेव (भा. प्र.) तथा जल उसे प्रभूत मात्रा में उष्ण या शीत, कालानुसार देना चाहिए। आमाशय ग्रहण्याशय में पित्त वृद्धि होकर अम्लपित्त, रक्त में पित्तवृद्धि हो तो रक्तपित्त, कामला रोग होते, आँत में पित्त प्रकोप हो तो पित्तातिसार होता है। स्थानिक पित्तवृद्धि हो, जैसे—भारी आघात लगने पर हो सकती है तो स्थानिक शोथ या विद्रधि का रोग होता है। गले के टान्सिल में आँत के अपैन्डिक्स में पित्त प्रकोप हो तो वहाँ विद्रधि का रोग हो जाता है। ये सब पित्तवृद्धि के रोग हैं और उस स्थान पर जीवाणुवृद्धि को रोकने के लिये पित्तवृद्धि के कारण होते हैं।

पित्त प्रधान रोगों में प्रयुक्त औषधियों का संक्षेप में उल्लेख किया जाता है।

रस—

प्रवालपंचामृत २ रत्ती २ बार। मुक्तापिष्टी, प्रवालपिष्टी १–१ रत्ती २ बार। वसन्तकुसुमाकर १ गोली २ रत्ती एक बार। लीलाविलासरस

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२ गोली २ बार। धात्रीलोह (धात्री ८, लोह ४, मुलैठी २, गुडूची क्वाथ ८ भावना) १ ग्राम २ बार। कामदुधा २ रति २ बार। प्रदरारिरस (यो. र.) २ गोली २ बार। प्रदरान्तकलोह ३ रत्ती २ बार।

बटी—

एलादिबटी (इलायची छोटी, दालचीनी ६–६ ग्राम, मुलैठी, तालमखाना, द्राक्षामिश्री ४–४ तोला, छोटी पीपल २ तोला) ४ रत्ती गोली, २ गोली ३ बार। मृत्युञ्जयबटी २–३ बार। खदिरादिबटी (कत्था १०, शीतल चीनी, कपूर, इलायची, सुपारी २–२ तोला) गोलियाँ मुख में रखें।

चूर्ण—

त्रिफला, पुष्यानुग, चन्ददादि चूर्ण, सितोपलादि, अर्जुन त्वक् चूर्ण (दूध से) प्रत्येक २ ग्राम २ बार। गंगाधर चूर्ण, रोग नाशक चूर्ण (योगी) २ माशा २ बार। त्रिफला मंडूर $\frac{1}{2}$ ग्राम २ बार। नारिकेललवण १ ग्राम २ बार। गैसान्तक चूर्ण (योगी) २ ग्राम २ बार।

अवलेह—

वासावलेह $\frac{1}{2}$ तोला २ बार। वासाखण्ड कूष्माणु १ तोला १ बार। गुलकन्द २ तोला। आँवला मुरब्बा चान्दी के वर्क के साथ २ आँवले रोज। इत्रीफल, हरड़ बढ़िया, आंवला, बहेड़ा १–१ छटाक, गुलाबफूलशुष्क, सनाय २–२ तोला। चूर्ण करें। बादामरोगन में भूनें। सबसे ३ गुणा शहद मिलायें। ४–५ ग्राम लें। त्रिफला चूर्ण उत्तम १ चम्मच घी, १ चम्मच शहद ४–४ चम्मच १ मात्रा। सुपारीपाक १ तोला १ बार।

घृत—

तिक्तघृत, महातिक्तघृत, दूर्वादिघृत पटोलादिघृत (भै. र.), महात्रिफला घृत १–१ चम्मच २ बार।

क्वाथ—

मंजिष्ठादि १ औं० १ बार। नवक कषाय (भै. र.) (त्रिफला, पटोलपत्र, नीमपत्र, मंजीठ, कुटकी, हरिद्रा समभाग) १ औंस त्वक् रोगो में।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेल—

जात्यादितेलयाघृत (व्रणे), पञ्च-वल्कलघृत (पैत्तिकशोथे), मधूच्छिष्टादितेल) (दग्धे), चन्दन तेल तथा मञ्जिष्ठादितेल (दग्धे), जीरक घृतम् (दग्धे), निम्बतैल (निमोलियों का तैल १ पाव, हरताल मनसिल ३–३ माशा, चन्दन, इलायची बड़ी, अगर, चमेली ६–६ माशे तक्र २ पाव तैल बनायें) भगन्दर में भरें।

कफ तत्व की अधिक मन्दता से रोग—

इन रोगों को Deficiency diseases कहते हैं। अर्थात् प्रोटीन, फैट, कार्वोज, विटामिन्स, मिनरल्स की न्यूनता से होने वाले रोग। आयुर्वेद में इनको अपतर्पण जनित रोग कहते हैं। चरक ने (सूत्र २३) कहा है—'देहाग्नि वल वर्णोजः शुक्रमांस परिक्षयः' छोटे बालकों में कृशता का रोग (Marasmus या Malnutrition) का रोग बहुत होता है। प्रोटीन भोजन न मिलने से बालकों में Kwashiorkor अपतर्पण जनित रोग होता है। विटामिनों के न मिलने से रिक्केट्स (Rickets), विटामिन 'ए' के न मिलने से रात्र्यन्धता का रोग होता है इत्यादि। विटामिन मिनरल्स के न मिलने से अनेक रोग होते हैं। वृद्धावस्था में इनके न मिलने से osteoporosis आदि रोग होते हैं। अपतर्पणजनित रोगों के लिये चरक (सूत्र २४) कहा है–'हिता मांसरसास्तस्मै पयांसि च घृतानि च। स्नानानि वस्तयोऽभ्यंगास्तर्पणास्तर्पणाश्चयेः। शर्करा पिप्पली तैल घृतक्षौद्रै, समांशकैः। सक्तुद्विगुणितो वृष्य स्तेषांमन्थः प्रशस्यते। सक्तवो मदिरा क्षौद्रं शर्कराचेतितर्पणम्। मन्थः खर्जूर मृद्विका वृक्षाम्लाम्लीक दाडिमैः। परुषकैः सामलकैः युक्तो मद्य विकारनुत्' चरक ने अपतर्पणजनित रोगों के लिये दूध, घी तथा फलों का विधान किया है। चरक ने अन्यत्र (सू. २५) कहा है—'क्षीरघृताभ्यासो-रसायनानाम्' वृद्धा वस्था में दूध, मुक्तापिष्टी, प्रवालपिष्टी लेने से osteo-pororis का भय नहीं रहता। शारीरिक श्रम करते रहने से भी यह रोग नहीं होता। अभिप्राय यह है कि वायु, पित्त, कफ इन धातुओं को स्वस्थ रखा जाए तो शरीर स्वस्थ एवं नीरोग रहता है।

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
१२ अगस्त १९८२

धर्मदत्त वैद्य

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद शिक्षा

(द्वादश प्रकरणों में प्रतिपाद्य आयुर्वेद शिक्षा

का

जीवनोपयोगी एवम् प्रेरणाप्रद शिक्षासार ।)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकरण - १

आयुर्वेद के मूल-तत्व

सत्व-रज-तम तथा पंच-भूत

आयुर्वेदानुसार सब जड़ चेतन जगत् पाँच मूल तत्वों से बना है। इन पाँच की ही सत्ता है। इसलिये 'भू-सत्तायाम्' धातु से इन पाँच को भूत भी कहा है।

इनमें प्रथम आकाशतत्व है अर्थात्—यह जो पोल दीखता है वह पोल नहीं है, वह भी एक द्रव्य है; हाँ, वह द्रव्य है पर निर्बाध या 'नानरजिस्टैन्ट' है। वह द्रव्य इसलिये है कि उसमें शब्द वहन का गुण है। वह स्वच्छ निर्मल है। अतः वह प्रकृति के सत्व गुण से उत्पन्न है।

दूसरा मूलतत्व गतितत्व या विद्युत्-तत्व है। इस गतितत्व को 'वागतौ' धातु से वायु या वात कहते हैं। प्रकृति में जो 'डायनैमिक' 'एनर्जी' है उसे वायु कहा है। सूर्य चन्द्र पृथ्वी आदि में तथा शरीर में जो विद्युत् सदृश गति हो रही है उसे वायु कहा है। सुश्रुत ने वायु को विक्षेप कर्मा कहा है। वाग्भट्ट ने वायु को शरीर की सर्व-चेष्टाओं का प्रवर्तक कहा है। चरक ने (चि० २८) इसे शरीर का बल कहा है। इसे प्रकृति के रजोगुण से उत्पन्न कहा है।

प्रकृति का तीसरा तत्व अग्नि है क्योंकि जब गति-तत्व उत्पन्न होता है तो स्वभावतः अग्नि-तत्व उत्पन्न हो जाता है। पदार्थों में जो अग्नि तत्व है उसे अग्नि तथा शरीरों में जो अग्नि है उसे 'तप' धातु से बनाकर पित्त कह दिया जाता है। यह प्रकृति में होने वाले सब रासायनिक परिवर्तनों का और शरीर में होने वाले सर्व

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पचनकर्मों का कारण है। इस तत्व में एक गुण रूप गुणविशेष है जो आकाश और वायु में नहीं है। यह परिवर्तन करता है; इसलिये इसे रजोगुण से और क्योंकि यह पचन द्वारा निर्मल करता है; इसलिये इसे रजोगुण और सत्वगुण से उत्पन्न कहा जाता है। शरीर का पित्त भी रजोगुण और सत्वगुण का प्रतिनिधित्व करता है। चरक ने (सू. १३) कहा है—'अग्निरेवपित्तान्तर्गतः पक्तिं करोति।' सुश्रुत ने कहा है--'पित्तमग्निकर्मणा अनुग्रहं करोति'।

अग्नितत्व का स्वाभाविक परिणाम द्रवता या 'लिक्विडिटि' का उत्पन्न करना है। अतः अग्नितत्व की उत्पत्ति के परिणाम रूप में द्रवत्व या अप्तत्व की उत्पत्ति स्वाभाविक है। अप्तत्व में कुछ स्थिरता का भाव उत्पन्न होता है तथा उसमें निर्मलता का भी एक गुण है। अतः अप्तत्व को तमोगुण और सत्वगुण से उत्पन्न कहा जाता है।

अग्नितत्व का स्वाभाविक परिणाम द्रवता या 'लिक्विडिटि' का उत्पन्न करना है। अतः अग्नितत्व की उत्पत्ति के परिणाम रूप में द्रवत्व या अप्तत्व की उत्पत्ति स्वाभाविक है। अप्तत्व में कुछ स्थिरता का भाव उत्पन्न होता है तथा उसमें निर्मलता का भी एक गुण है। अतः अप्तत्व को तमोगुण और सत्वगुण से उत्पन्न कहा जाता है।

अप्तत्व को सोमतत्व भी कहा है क्योंकि अप्तत्व वनस्पतियों तथा शरीरों का रस से पोषण करता है। 'सोमोभूत्वारसात्मक : गीता' उसे सोम तथा कफ भी कहा है। 'कफ' शब्द का अर्थ है जो 'क' अर्थात् जल से फलित हो वह कफ है। शरीर में कफ को श्लेष्मा भी कहा है जो शब्द श्लिष धातु से उत्पन्न होता है अर्थात् जो तत्व जोड़-जोड़ कर शरीर को बनाता हो। शरीर में वृद्धि का कारण हो। इसलिये सुश्रुत ने कफ तत्व को 'विसर्गकर्मा' कहा है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अप्तत्व की उत्पत्ति के बाद 'संघात' या 'सौलिडिटि' का उत्पन्न हो जाना स्वाभाविक है। 'संघातवतीपृथ्वी' के अनुसार संघात हो जाने के तत्व को पृथ्वी-तत्व कहा है। संघात में गुरुता, स्थिरता आदि गुण होते हैं। अतः पृथ्वी तत्व को तमोगुण बहुल कहा है।

इसप्रकार आयुर्वेद इन पंचमहाभूतों से ही जड़चेतन जगत् की उत्पत्ति मानता है।

जड़जगत् के पदार्थों को बनाने वाले ये पंचमहाभूत हैं पर शरीर को धारण करने वाले वायु, पित्त और कफ ये तीन तत्व हैं। 'शरीर धारणात् धातवः' के अनुसार वायु, पित्त, कफ को त्रिधातु भी कहते हैं। शरीर के स्वास्थ्य या रोगों की व्याख्या आयुर्वेद वात, पित्त, कफ इन तीन धातुओं या इन तीन दोषों की परिभाषा में ही करता है।

सत्व-रज-तम—

मन की सब स्वाभाविक अस्वाभाविक क्रियाओं की व्याख्या आयुर्वेद सत्व-रज-तम इन तीन सूक्ष्म गुणों (रस्सियों या सूत्रों) की परिभाषा में करता है।

मनुष्य में **सत्त्वगुण** की प्रधानता हो तो बुद्धि, विवेक, ज्ञान और विचार शक्ति की विशेषता होती है। वह बुद्धि से प्रेरित होता है, आवेश या 'इमोशन' से कभी प्रेरित नहीं होता। उसकी प्रतिभा तथा विचार शक्ति तीव्र होती है जिससे वह हर बात में यथार्थ दर्शी होता है। उसमें ज्ञान का एक ऐसा प्रकाश होता है कि वह संसार की हर बात के यथार्थ स्वरूप को तुरन्त समझ लेता है। वह २४ घंटे प्रकाश में निवास करता है। उसकी बुद्धि निर्मल और स्वस्थ होती है। वह आवेश, उद्वेग या 'इमोशन' से सदा ऊपर रहता है। उसके मन और शरीर दोनों में स्वच्छता रहती है। उसमें शान्ति, सत्यान्वेषिता, सहिष्णुता, अहिंसा, मैत्री, प्राणीमात्र के प्रति दया और सेवा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का भाव रहता है। मन के सदा शान्त और प्रसन्न रहने से उसका शरीर भी नीरोग रहता है। उसके चेहरे पर सदा प्रसन्नता झलकती है। उसकी वाणी में एक विशेष तेज और प्रभाव रहता है जिसके कारण उसके शत्रु भी उसके पास आकर हतप्रभ हो जाते हैं। वह निर्भय होता है; एक परमेश्वर से डरता है और किसी से नहीं। सत्व प्रधान व्यक्ति को यथार्थदर्शी, यथार्थकारी और आप्त कहते हैं।

मनुष्य **रजोगुण** प्रधान हो तो उसमें क्रियाशीलता या 'एनर्जी' की प्रधानता होती है, उसमें आवेश, उद्वेग या 'इमोशन' की विशेषता होती है। उसमें कर्मण्यता, प्रयत्नशीलता, साहसिकता, उद्योगशीलता और घोर परिश्रम करने की प्रवृत्ति होती है। वह अच्छे-बुरे साधनों का विशेष विचार नहीं करता। अपना उद्देश्य प्राप्त करने के लिये अथक परिश्रम करता है। यदि वह विज्ञान, कलाकौशल, व्यापार आदि में लगता है तो सफलता प्राप्त करता है और उपयोगी सिद्ध होता है। यदि वह युद्धप्रिय, कलह शील, स्वार्थी, अपराधपरायण होता है तो वह लोगों के दुःख का कारण बन जाता है।

मनुष्य **तमोगुण** प्रधान हो तो उसके मन, बुद्धि तथा तन में सब में मन्दता या 'इनर्शिया' का भाव रहता है। उसमें किसी बात को ठीक-ठीक ग्रहण करने की शक्ति मन्द होती है। आलस्य, प्रमाद, लापरवाही के दोष होते हैं। समय पर काम न करने या विचार पूर्वक काम न करने से उसे अपने कामों में असफलता मिलती है जिससे वह दुःखी और चिन्तित रहता है।

इस प्रकार शरीर के धारक कफ, पित्त, वायु ठीक रहें तो शरीर को स्वस्थ कहा जाता है अर्थात् धातुओं में वृद्धिकर्म यथावत् रहे तो कफ सम अवस्था में है, ऐसा कहा जाता है। यदि अन्न का पाक धातुओं का पाक तथा धातुओं से उत्पन्न होने वाले मलों का पाक ठीक रहे तो पित्त सम अवस्था में है, ऐसा कहा जाता है। यदि शरीर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में होने वाली गतियाँ तथा आँख, कान, त्वचा आदि से प्रतीत होने वाली संज्ञायें ठीक रहें तो वायु सम अवस्था में है, ऐसा कहा जाता है।

इसके विपरीत धातुओं में वृद्धिकर्म मन्द हो या गुल्म ग्रन्थि आदि के रूप में विशेष हो या कफ रूप में शरीर के अन्दर से मल अधिक निकलने लगे तो कफ को विकृत हुआ कहा जाता है। यदि देहाग्नि के मन्द हो जाने से अन्नपाक, धातुपाक और मलपाक के मन्द हो जाने पर शरीर में आमद्रव्य, 'मेटाबोलाइट्स' या अस्वाभाविक द्रव्य उत्पन्न हो जायें या किसी जीवाणु के विष के प्रविष्ट हो जाने से शरीर में उष्मा बढ़ जाये, ज्वर हो जाये, या रक्त का अधिक पाक होने से कामला पाण्डु आदि रोग हो जाये या माँस का पाक अधिक होने से पूयभाव हो जाये तो उसे पित्त रोग कहते हैं। यदि शरीर के किसी अंग में चलता या गति या कंपन बढ़ जाये अंग में स्थिरता कम होकर अस्थिरता बढ़ जाये या आँख कान त्वचा आदि से प्रतीत होने वाली संज्ञा मन्द हो जाये तो शरीर में वायु विकृत हुआ कहा जाता है।

इसी प्रकार यदि मन में रजोगुण की वृद्धि हो जाये तो ऐसा मानस रोगी पर्यटनशील बेचैन और अस्थिर प्रवृत्ति का हो जाता है। किसी एक काम को या बात को देर तक नहीं करता। उसके विचार, कार्य, चेष्टायें शीघ्र बदल जाती है। किसी न किसी व्यर्थ कार्य में प्रवृत्त रहता है। सोता बहुत कम है। अस्थान में नाचता, गाता, बोलता है। अस्थिरता उसका प्रधान लक्षण है।

यदि मन में तमोगुण बढ़ जाये तो वह अपना काम छोड़ देता है, उदासीन होकर एक ही अवस्था में देर तक पड़ा रहता है। किसी भारी भ्रम में रहता है या किसी व्यर्थ सी पूजा-पाठ की अवस्था में ही रहता है और उसके मन बुद्धि शरीर में जड़ता-सी छाई रहती

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। सब मानस रोग सत्वगुण की न्यूनता से होते हैं। अतः कुछ दिनों तक मानस रोगी को केवल बहुत से जल पर, फिर फल रसों पर रखकर उसके रज और तम के कम हो जाने पर, फिर उसे गो दुग्ध पर तथा गोघृत साधित ब्राह्मीघृत, घृतमिश्रित वचा, मधु मिश्रित ब्राह्मी स्वरस तथा फलों आदि सात्विक आहारों पर १–२ मास रखा जावे, जैसा अस्पताल में रख कर हो सकता है तो उसे फिर से स्वस्थ किया जा सकता है, प्रारम्भ में उसे शान्त रखने के लिये सर्पिना गोली २–३ बार रोज देनी चाहिए।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऽ दिनों
सों पर
ो दुग्ध
मिश्रित
स रखा
स्वस्थ
सर्पिना

प्रकरण - २

आयुर्वेदोक्त २० गुणों का वर्णन

आयुर्वेदानुसार सर्व द्रव्य पाँच भौतिक हैं। आहार द्रव्यों तथा औषध द्रव्यों के जो गुण शरीर में प्रकट होते हैं उनको देखकर कह दिया जाता है कि अमुक द्रव्य अग्नितत्व या अप्तत्व या वायुतत्व प्रधान है। द्रव्यों में विद्यमान गुणों में से २० का आयुर्वेद में उल्लेख हुआ है, उनका वर्णन यहाँ किया जाता है। इनमें से भी पहले ५-६ गुणों को अधिक प्रमुखता दी जाती है। रुक्ष, उष्ण, लघु, गुण द्रव्य कफ रोगों में, स्निग्ध, उष्ण, गुरुगुण, द्रव्य वायुरोगों में, शीतल, लघुगुण द्रव्य पित्त रोगों में उपयुक्त हैं।

१. गुरु अथवा लघु गुण

जो आहार औषध तथा विहार बल बढ़ाते, शरीर का सन्तर्पण वृंहण करते हैं, कफ वर्धक होते हैं उन्हें गुरु तथा जो शरीर के अपतर्पक होते, लेखन करते, कफ शामक होते हैं उन्हें लघु गुण कहा जाता है। पहले प्रकार के द्रव्यों को अप्तत्व तथा पृथ्वीतत्व प्रधान, तथा दूसरे प्रकार के द्रव्यों को वायु आकाश और अग्नितत्व प्रधान, कहा जाता है।

२. शीत अथवा उष्ण गुण

जो आहार औषध तथा विहार देहाग्नि को तीव्र करते, पित्त वर्धक होते, पचन कर्म को बढ़ाते हैं उन्हें उष्ण गुण कहते हैं तथा उन्हें अग्नितत्व प्रधान कहते हैं। इसके विपरीत जो आहार आदि देहाग्नि को मन्द करने का, पचनकर्म को मन्द करने का कार्य करते

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं उन्हें शीत गुण कहते हैं तथा उन्हें अप्तत्व या वायुतत्व प्रधान कहते हैं। शीतद्रव्य प्यास स्वेद दाह को दूर करते हैं।

३. स्निग्ध, रूक्ष गुण

जो आहार आदि शरीर में चर्बी को बढ़ाते, मृदुता करते, बल बढ़ाते, सन्तर्पक होते हैं उन्हें स्निग्ध गुण कहते हैं तथा उन्हें अप्तत्व प्रधान कहते हैं। इसके विपरीत जो आहार आदि चर्बी को सुखाते, स्तंभन, खरगुण होते, मांस को कम करते उन्हें रूक्ष गुण कहते हैं तथा उन्हें अग्नितत्व और वायुतत्व प्रधान कहते हैं।

४. स्थूल, सूक्ष्म गुण

जो आहार आदि शरीर के बोझ को बढ़ाते, चर्बी को पोषित करते हैं उन्हें स्थूल गुण कहते हैं तथा ऐसे आहार आदि को पृथ्वीतत्व प्रधान कहते हैं। जो आहार आदि चर्बी, मांस, अस्थि आदि धातुओं का पोषण कम करते हैं उन्हें सूक्ष्म गुण कहते हैं। उन्हें आकाशतत्व, वायुतत्व या अग्नितत्व प्रधान कहते हैं।

५. तीक्ष्ण, मन्द गुण

जो आहार आदि शरीर में अग्नि को, पचनकर्म को तेज करते हैं, दाह कारक होते हैं उन्हें तीक्ष्ण गुण कहते हैं तथा उन्हें अग्नितत्व प्रधान कहते हैं। इसके विपरीत जो द्रव्य प्रयोग करने से देहाग्नि को मन्द करते हैं उन्हें मन्द गुण कहते हैं तथा उन्हें अप्तत्व और पृथ्वीतत्व प्रधान कहते हैं।

६. मृदु, कठिन गुण

जो आहार-विहार आदि शरीर की धातुओं को स्वाभाविक मृदुता में रखते हैं, उनके अच्छे पोषक होते हैं उन्हें मृदु गुण कहते हैं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा उन्हें अप्‌तत्व प्रधान कहते हैं। कफ के पोषक कहते हैं। जो आहार विहार शारीरिक धातुओं से मृदुता कम करते, उनमें कठिनता कठोरता (Fibroid) का भाव बढ़ाते हैं उन्हें कठिन गुण कहते हैं। उन्हें पृथ्वीतत्व प्रधान कहते हैं।

७. स्थिर, चल गुण

जो आहार-विहार आदि शरीर को बलिष्ठ करते, उसमें स्थिरता, अविचलता का गुण उत्पन्न करते हैं उन्हें स्थिर गुण कहते हैं तथा उन्हें पृथ्वीतत्व प्रधान मानते हैं। इसके विपरीत जो आहार-विहार आदि शरीर, मन में चंचलता, अस्थिरता, कम्पन आदि का भाव उत्पन्न करते हैं उन्हें चल गुण कहते हैं तथा उन्हें वायुतत्व प्रधान मानते हैं।

८. सान्द्रता, द्रवता के गुण

जो आहार-विहार आदि शरीर के द्रवों में जल को ज्यादा नहीं बढ़ने देते, उन्हें घन और गाढ़ा रखते हैं, बन्धकारक होते हैं उन्हें सान्द्रगुण कहते हैं तथा उन्हें पृथ्वीतत्व प्रधान कहते हैं। जो आहार आदि शरीर के द्रवों में द्रवता क्लेदन या अधिक पतलापन लाते हैं उन्हें द्रवगुण (Fatty degeneration) कहते हैं तथा उन्हें अप्‌-तत्व प्रधान मानते हैं।

९. पिच्छिल, विशाद गुण

जो आहार आदि शरीर द्रवों में चपकीलेपन (Viscidity) को बढ़ाते हैं, संधान करते हैं उन्हें पिच्छिल गुण कहते तथा अप्‌तत्व प्रधान मानते हैं। जो उनमें क्लेद का शोषण करते, रोपण करते उन्हें विशद गुण कहते हैं तथा वायुतत्व पृथ्वीतत्व तथा अग्नितत्व प्रधान मानते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१० श्लक्ष्ण, खर गुण

जो आहार-विहार अस्थि, स्नायुतंतु आदि में शीशे की तरह कठोरता और चिकनापन उत्पन्न करते हैं उन्हें श्लक्ष्ण गुण (Hyalive degeneration) कहते हैं और आकाश तत्व प्रधान मानते हैं। जो आहार-विहार अस्थियों आदि में खरता उत्पन्न करते उन्हें खरगुण कहते तथा वायुतत्व प्रधान मानते हैं।

इनमें से किस-किस गुण की आहार द्रव्यों में प्रधानता है उसकी सूची संक्षेप में दी जाती है :—

धान्यवर्ग

१. चावल—लघु, शीत, स्निग्ध गुण। इनमें साठी चावल श्रेष्ठ है। एक साल पुराना चावल अधिक लघु गुण होता है। चावलों की खील लघु तथा रुक्ष गुण है। क्षुद्र धान्य सावक, कोदों, कंगनी आदि अधिक लघु, शीत, रुक्ष गुण होते हैं।

२. गेहूँ—शीत, गुरु, स्निग्ध, स्थिर गुण—ये लधिक पुराने हितकर नहीं।

३. जौ - शीत, रुक्ष, लघु गुण होते हैं।

४. मूँग—लघु, शीत, रुक्ष गुण।

५ माष—गुरु, स्निग्ध, उष्ण गुण। राजमाष—गुरु, रुक्ष, विशद गुण।

६. मसूर-मोठ-अरहर-चना—शीत, लघु, रुक्ष गुण। भुना चना अधिक रुक्ष गुण।

७. कुलथी—लघु, उष्ण गुण।

८. मटर—रुक्ष, उष्ण, गुरु गुण।

९. तिल—गुरु, स्निग्ध, उष्ण गुण।

१०. सरसों—स्निग्ध, उष्ण, तीक्ष्ण गुण।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. राई—तीक्ष्ण, उष्ण गुण ।
१२. तिल सरसों आदि के तेल—उष्ण, तीक्ष्ण, गुरु गुण ।

दुग्ध वर्ग

१ दूध—स्निग्ध, शीत, गुरु, मृदु, पिच्छिल गुण ।
२. दही—उष्ण, स्निग्ध, गुरु गुण ।
३. तक्र या मथित—लघु, उष्ण, रुक्ष गुण ।
४. घृत—मखन-शीत, गुरु, स्निग्ध गुण ।

इक्षु वर्ग

१. इक्षुरस—शीत, गुरु, स्निग्ध गुण ।
२. गुड़—किंचित् उष्ण, स्निग्ध ।
३. चीनी—शीत, गुरु, स्निग्ध गुण ।
४. स्वच्छ मिश्री—लघु, शीत गुण ।
५. मधु—लघु, रुक्ष शीत गुण ।

शाक वर्ग

१. बथुआ—लघु, उष्ण गुण ।
२. चौलाई—लघु, शीत, रुक्ष गुण ।
३. सरसों शाक—उष्ण, रुक्ष गुण ।
४. पालक—शीत, लघु, गुण ।
५. कुलफा—रुक्ष, गुरु ।
६. मूली—उष्ण, लघु, तीक्ष्ण गुण ।
७. गाजर—उष्ण, लघु, तीक्ष्ण गुण ।
८. करेला—लघु, शीत गुण ।
९. घिया—लघु, शीत गुण ।
१०. घिया तोरी—लघु, शीत ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. काशीफल—लघु, शीत गुण।
१२. परवल—लघु, स्निग्ध, उष्ण गुण।
१३. बैंगन—लघु, उष्ण गुण।
१४. सूरणकंद—रुक्ष, लघु गुण।
१५. टिण्डे—शीत, रुक्ष गुण।
१६. आलू—शीत, गुरु।
१७. लहसन—उष्ण, स्निग्ध, तीक्ष्ण, गुरु।
१८. पियाज—तीक्ष्ण, गुरु।
१९. कच्चाकेला—शीत, स्निग्ध, गुरु।
२०. भिस—शीत, गुरु।
२१. अदरख—उष्ण, तीक्ष्ण।
२२. मरिच—उष्ण, तीक्ष्ण, रुक्ष।
२३. पिप्पली—कुछ उष्ण, स्निग्ध, लघु।
२४ जीरा—शीत, लघु, रुक्ष।
२५. धनिया—लघु, स्निग्ध, शीत।
२६. कालाजीरा—उष्ण।
२७. अजवायन—उष्ण, रुक्ष।
२८. निम्बु—उष्ण, लघु।
२९. कूष्मांड—शीत, गुरु।
३०. सौंफ—उष्ण, स्निग्ध।
३१. मेथी—उष्ण-लघु।

लवण

१. सैन्धव—शीत, लघु, स्निग्ध गुण।
२. काला नमक—लघु, उष्ण।
३. सामुद्र—उष्ण, स्निग्ध।
४. औद्भिद—उष्ण, तीक्ष्ण, लघु।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फल वर्ग

१. आम—शीत, स्निग्ध, पतले रस का लघु, गाढ़े गूदे का गुरु।
मुरब्बा—शीत, गुरु। दूध में मिलाया-शीत, गुरु।
२. अंगूर—शीत, स्निग्ध।
३. खजूर—गुरु। स्निग्ध, शीत।
४. अंजीर—शीत, गुरु।
५. नारियल—काजल-शीत, लघु; गिरी—शीत, गुरु।
६. केला—शीत, गुरु, स्निग्ध, विष्टम्भि।
७. तरबूज—शीत, गुरु।
८. खरबूजा—शीत, स्निग्ध।
९. आड़ू—शीत गुरु।
१०. सन्तरा खट्टा—उष्ण, लघु। मीठा—शीत, लघु, स्निग्ध।
११. नाख—लघु, शीत।
१२. मीठा निम्बु—शीत, गुरु।
१३. शहतूत—गुरु, शीत।
१४. फालसा—लघु, शीत।
१५. पियाल—शीत, स्निग्ध। पियालमज्जा—स्निग्ध।
१६. जामुन—शीत, रुक्ष, गुरु।
१७. बेर बड़ा—शीत, स्निग्ध, गुरु।
१८. कटहल—शीत, स्निग्ध।
१९ आँवला—शीत, रुक्ष।
२०. हरड़—उष्ण, लघु, रुक्ष।
२१. पीलु—शीतल, लघु।
२२. कमलडोडे के बीज—शीत गुरु, रुक्ष।
२३. सिंघाड़ा—शीत, गुरु, रुक्ष।
२४. शहतूत—शीत, गुरु।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२५. अनार—मीठा लघु शीत-स्निग्ध ।
२६. ककड़ी—शीत, गुरु ।
२७. सुपारी—शीत, रुक्ष, गुरु ।
बादाम आदि मेवे—उष्ण, स्निग्ध, गुरु गुण हैं ।
गोमूत्र—उष्ण, लघु गुण—अग्निदीपन, कफ वात रोग हर ।

प्रधान आहार द्रव्यों के गुण--

गो दुग्ध—गुरु, स्निग्ध, शीत गुण; रस तथा पाक में मधुर, वात-पित्तहर, बल्य, जीवनीय रसायन, मेध्य, आयुष्य ।

महिषी दुग्ध – गुरु, शीत, अति स्निग्ध, अभिष्यन्दी, अग्निनाशक, वातपित्त रोग हर, बल्य, पोषक, निद्राकर ।

गो घृत—बुद्धि, स्मृति, मेधा, ओज, अग्नि, बल, आयु, चक्षु शक्तिवर्धक है । गुरु, शीत, स्निग्ध गुण; वातरोग, पित्तरोग, कफरोग, हर । मखन—शीत-स्निग्ध लघु ।

महिषी घृत—गुरु, शीत, अति स्निग्ध; वात-पित्त हर; श्लेष्मवर्धक ।

दधि—उष्ण, स्निग्ध, बल्य, अभिष्यन्दी, कफमेदोवर्धक ।

तक्र—लघु, उष्ण, रुक्ष, अग्निदीपक, वात-कफ हर, स्नेह व्यापत् हर ।

तेल—उष्ण, बृंहण, गुरु, वातरोग हर, पित्त वर्धक, मांस वर्धक ।

मधु—लघु, रुक्ष, शीत, अग्निदीपन, बल्य, कफमेदोहर, पित्तरोगहर, चक्षुष्य ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकरण - ३

द्रव्यों के रस का शरीर पर प्रभाव

आहार तथा औषध द्रव्यों में छः रसों में किसी एक दो रसों की प्रधानता होती है। उस रस के अनुसार भी उस द्रव्य का शरीर पर प्रभाव होता है। द्रव्य में मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कषाय-इन छः में से किसी की प्रधानता होती है। इनमें से प्रथम मधुर रस द्रव्यों में पृथ्वी अप्तत्वों की प्रधानता होती है।

मधुर रस—द्रव्य प्रायः गुरु, स्निग्ध, शीत गुण होते हैं। इसीलिये ये शरीर में कफतत्व के वर्धक होते हैं। शारीरिक धातुओं के लिये वृंहणीय, जीवनीय, तर्पणीय, बलप्रद, प्राणप्रद होते हैं। शरीर में स्निग्धता को उत्पन्न करने के लिये ये द्रव्य सर्वोत्तम हैं। शरीर में शैत्य का गुण भी सबसे अधिक मधुर रस द्रव्यों में ही पाया जाता है। ये कफतत्व के पोषक हैं, परन्तु पुराने चावल, दो चार मास पुराने गेहूँ, साँवक, कोदों, कँगनी आदि क्षुद्र चावल, मूँग, जौ, मधु, मिश्री तथा दशमूल आदि मधुर रस होने पर भी कफ वर्धक नहीं होते, प्रत्युत कफ रोगों में प्रयुक्त होते हैं। मधुर रस पदार्थ उन्हीं को अनुकूल पड़ते हैं जो शारीरिक श्रम करते हैं।

शारीरिक श्रम न करने वाले मधुर रस द्रव्यों का अर्थात् अन्न, घृत, दूध, चीनी आदि का अधिक सेवन करें तो उनमें कफ रोगों के होने की प्रवृत्ति बढ़ती है। उदाहरणतः मेदोवृद्धि, अग्निमन्दता सम्बन्धी रोग, वृक्काश्मरी, मूत्र मार्ग में शोथ, पित्ताश्मरी, मधुमेह, तन्द्रा, निद्रा, गलरोग, स्वर भंग, कास, श्वास, प्रतिश्याय, त्वग्रोग,

 CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलर्जी, नेत्ररोग, शरीर में सामर्थ्य की मन्दता, धमनी स्रोतोरोध, हृदय रोग, अर्वुद, ग्रन्थि, गण्ड आदि कफ रोग हो सकते हैं।

अम्लरस द्रव्यों—में पृथ्वी, अग्नितत्वों की प्रधानता रहती है। इसलिये ये स्निग्ध तथा उष्ण एवं लघु गुण होते हैं। सर्वरसों में अम्लरस को अधिक उष्ण माना जाता है। यह अग्निवर्धक होता है, अन्न पाचन में सहायक है। अतः यह शरीर के वृद्धितत्व कफ का पोषक होता है। शरीर में निर्बलता के या वायु रोगों के लक्षण हों तो उपयोगी है। अम्ल द्रव्यों में से आँवला और अनार कुछ अम्ल होने पर भी शीत गुण हैं।

पर अम्लरस का सेवन कम ही करना चाहिये। अधिक सेवन से यह पित्त या देहाग्नि का वर्धक है। पेट में एसिडिटि हो, छाती में दाह होता हो अथवा शरीर में कहीं व्रण, क्षत, दग्धव्रण, पूयभाव हो, अस्थि में भंग हो या कोई चोट लगी हुई हो तो अम्लरस के सेवन से उनमें वृद्धि होती है।

लवणरस द्रव्यों—में अप्तत्व और अग्नितत्व की प्रधानता होती है। अतः लवणरस द्रव्य किंचित् उष्ण, किंचित् स्निग्ध, किंचित् तीक्ष्ण और किंचित् गुरु होते हैं। स्निग्ध, गुरु गुण होने से शरीर में धातुओं का पोषण करते हैं। धातुओं में मृदुता लाते हैं। उनके लिये तर्पक होते हैं, बल वर्धक होते हैं एवं कफतत्व के पोषक होते हैं। इसीलिये लवण शरीर में कफतत्व के वर्धक होते हैं। कफ के पोषक होने से निर्बलता के चिह्नों से युक्त वायुरोगों में उपकारी होते हैं। सामुद्र लवण, बिड लवण, कृष्णलवण आदि उष्णवीर्य होते, परन्तु सैंधव लवण शीतवीर्य होता है तथा लघु गुण, कटुपाकी, मलमूत्र प्रवर्तक, नेत्रों के लिये हितकर, पेट में विदाह न करने वाला होता है।

लवण वायु रोगों में उपकारी होने पर भी यदि उसका अधिक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा में सेवन करें तो वह पित्त प्रकोपक हो जाता है। शरीर में सूजन हो, पूयभाव हो, तापमान बढ़ा हो, रक्त में कोई जीवाणु विष हो, कामला हो, खुजली हो, मुखपाक हो, नेत्र शोथ हो, खून जाता हो, गठिया हो, अम्ल पित्त हो, बाल गिरते हों, बाल आयु से पहले श्वेत हो जाते हों, दाँत या दंत मांस में रोग हो तो लवण का प्रयोग इन रोगों को बढ़ाता है। पुंस्त्वशक्ति मन्द हो तो भी लवण का सेवन बहुत कम करना चाहिये। उष्णता का गुण सबसे अधिक लवण में है। नमक अधिक लेने से मांस शिथिल होते हैं; क्लेश सहने की शक्ति कम होती है। चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ जाती हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त तीन रस शरीर के लिये पोषक, कफ तत्व के वर्धक एवं वायु रोगों के लिये उपकारी हैं।

कटुरस द्रव्यों—में अग्नितत्व तथा वायुतत्व की प्रधानता होती है। इसलिये कटुपदार्थ उष्ण, लघु और रुक्ष गुण होते हैं। उष्ण होने से अग्निदीपक होते हैं, अन्न रोचक होते हैं। उष्ण, लघु, रुक्ष होने से शरीर में कफ दोष बढ़ा हो तो उसे शान्त करते हैं अर्थात् मेदा बढ़ी हो, गले, श्वासमार्ग में कफ बढ़ा हो, त्वचा में खुजली हो, कोई कफ का विकार हो तो कटुरस उपकारी होता है।

कटुरसद्रव्यों का अति सेवन कफतत्व को अधिक घटाता है, जिससे शरीर में वायुवृद्धि सूचक, निर्बलता सूचक लक्षण, शिरोभ्रम, कम्प, हाथ, पृष्ठ, पाँव आदि मांसों में शूल आदि लक्षण होते हैं। पुंस्त्वशक्ति भी मन्द होती है।

तिक्तरस द्रव्य—वायु तथा आकाश तत्व प्रधान होते हैं। इसीलिये ये लघु, रुक्ष, शीत, विशद गुण होते हैं। तिक्त द्रव्य खाने से अन्न की रुचि बढ़ती है। पाचक अग्नि भी ठीक काम करती है। रक्त में विद्यमान विष नष्ट होता है। रक्त शुद्ध होता है। स्त्रियों में स्तन्य शुद्ध होता है। त्वग्रोग शान्त होते हैं। ज्वर में दाह कम होता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मलमूत्र में विकार हो तो ठीक होता है। मेदा बढ़ी हो तो घटती है। शरीर में कहीं व्रण, पूय हो तो वह सूखती है। धमनियों के अन्दर फैट अधिक हो तो वह सूखता है। यह कफ-पित्त रोगों में उपकारी है। विशेषतः कफ दोष का शामक है। गिलो, तिक्त होने पर भी उष्ण गुण है।

पर तिक्त रस के अधिक लेने से वायु रोगों के होने का भय रहता है। शरीर का बल घटता, कृशता आती, शिरोभ्रम, शिर में दर्द, मांसों में दर्द, अर्दित, स्तम्भ आदि रोगों के होने की आशंका रहती है।

कषायरस द्रव्य—पृथ्वी तथा वायु तत्व प्रधान द्रव्यों में कषाय रस की प्रधानता रहती है। अतः कषायरस द्रव्य रुक्ष होते हैं। साथ ही शीत, विशद गुण होते हैं। ये लघु गुण नहीं, ना ही विशेष गुरु होते हैं। ये प्रायः संग्राही गुण होते, मलमूत्र व्रण आदि पर इनका यही प्रभाव होता है। इस प्रकार ये कफ दोष के शामक होते हैं। हरीतकी में कषाय रस है, पर फिर भी वह मल रेचक है।

इस रस का अधिक प्रयोग वायु रोगों को उत्पन्न करता है। मुख सूखता, मलमूत्र सूखते, कंठ सूखता, स्तम्भ रोग, अंगों में स्फुरण या चलन तथा शरीर के स्रावों के सूखने का भय रहता है।

इस प्रकार पहले तीन रस कफतत्व के वर्धक और पिछले तीन रस कफतत्व के शामक होते एवं निर्बलता सूचक वायु रोगों का कारण हो जाते हैं। मधुर, तिक्त, कषाय रस, पित्त शामक तथा कटु अम्ल लवण रस पित्त वर्धक होते हैं।

रस के अनुसार गुणों की न्यूनाधिकता

१. गुरुता का गुण सबसे अधिक मधुर रस में है। लवण में मन्द रूप में है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. स्निग्धता का गुण सबसे अधिक मधुर रस में है, उससे कम अम्ल तथा लवण रस में है।

३. उष्णता का गुण सबसे अधिक लवण में, उससे कम अम्ल और कटुरस में है।

४. शीतलता का गुण सबसे अधिक मधुर रस में है। उससे कम कषाय तथा तिक्त में है।

५. रुक्षता का गुण सबसे अधिक कषाय रस में है। उससे कम कटु तथा तिक्त में है।

६. लघुता का गुण सबसे अधिक तिक्त रस में, उससे कम कटु रस में है।

रस विज्ञान से पता लगता है कि किसी एक रस का अधिक सेवन रोग का कारण हो सकता है। मधुर, अम्ल, लवण, कटु रसों का अधिक सेवन किया जाता है, पर कभी-कभी तिक्त कषाय रसों का सेवन भी करना चाहिये। चरक ने ठीक कहा है—'नित्यं सर्वरसाभ्यासः'। षड्रस भोजन को सर्वोत्तम माना जाता है।

05648

श्री धर्मदत्त वैद्य संग्रह

पुस्तकालय
पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकरण - ४

त्रिधातु विज्ञान

आयुर्वेद कफ-पित्त और वायु इन तत्वों को शरीर का धारक तत्व कहता है एवं इनको त्रिधातु कहता है। जैसे सत्व, रज, तम इन तीन से सब संसार चल रहा है वैसे इन धातुओं के द्वारा हमारा शरीर चल रहा है। मूल में ये सूक्ष्म या अव्यक्त हैं, इनके कर्मव्यक्त हैं; ये व्यापी और सर्वशरीर चर हैं, अर्थात् शरीर के प्रत्येक सेल में जो कार्य हो रहा है वह इन्हीं के कारण हो रहा है। 'वात पित्त श्लेष्माण एव देह संभव हेतवः' (सु० सू० २।)

कफतत्व-

'क' का अर्थ जल है; जो पंचभूतों के जल से फलित हो उसे कफ कहा है। इसे श्लेष्मा भी कहा है। श्लिष अर्थात् जोड़-जोड़कर शरीर को बनाता हो, उसे श्लेष्मा भी कहा है। इसे सोमतत्व भी कहा है, जैसे पृथ्वी में सोमतत्व सब वनस्पतियों को बनाता है वैसे यह भी शरीर को बनाता है। कहा है "यश्चाश्लिष्य वपुं सदा रसयति प्रीणाति सोऽयं कफः" शरीर की वृद्धि उपचय दृढ़ता इसी के कारण है। मन में जो उत्साह है, ज्ञान और बुद्धि, सहन शीलता, क्षमता है वह इसी के कारण है (च० सू० । २)। आयु के प्रथम २५-३० वर्ष तक इसकी प्रबलता रहती है। कफ को वृद्धितत्व या 'ग्रोथ फैक्टर आफ लाइफ' कह सकते हैं। बालकपन में तथा जवानी में कफतत्व की प्रबलता रहती है। २५ वर्ष की आयु तक शरीर पूरी तरह पनप जाता है, जितनी ऊँचाई होनी होती है, हो जाती है। २५-३० वर्ष के बाद भी कफ का कार्य मन्द रूप में जारी रहता है। देखने में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आता है कि सीखने या ग्रहण करने या मेधा शक्ति, आदमी की ४० वर्ष तक ठीक रहती है। नेत्रों की दृष्टि ५० वर्ष की आयु तक ठीक रहती है। त्वचा की कान्ति या आभा ६० वर्ष की आयु तक कायम रहती है। आदमी की प्रजनन शक्ति ७० तक बनी रहती है। शरीर की कर्म सामर्थ्य ८० वर्ष तक रहती है। आदमी की बुद्धि ९० वर्ष तक ठीक काम देती है, कर्मेन्द्रियाँ १०० वर्ष की आयु तक काम देती हैं। कथन का अभिप्राय है कि कफतत्व का कार्य २५-३० वर्ष की आयु के बाद भी रहता है। धीरे-धीरे कम होता जाता है।

वृद्धि के अतिरिक्त कफतत्व क्षतिपूर्ति करता है। बाहर से आने वाले जीवाणुओं का प्रतिकार करता है। रोग क्षमता प्रदान करता है। शीत-उष्ण को सहने की शक्ति देता है। शरीर में गुरुता, दृढ़ता, स्थिरता, स्निग्धता, क्षमता देता है तथा मन में सहन शीलता, धीरता, निश्चलता, शान्ति, सन्तोष आदि की शक्ति देता है। इसे हम 'ग्रोथफैक्टर' या 'वाटर आफ लाइफ' भी कह सकते हैं।

मधुर, अम्ल, लवण रस भोजनों; गुरु, स्थिर, शीत, स्निग्ध, स्थूल, मन्द, मृदु, पिच्छिल गुण द्रव्यों से; अर्थात् अन्न, दूध, घृत, दही, दालों, फलों, सब्जियों, सूखे मेवों आदि पोषक द्रव्यों से इसका पोषण होता है। आराम से, नींद से, निश्चिन्तता, प्रसन्नता, आमोद-प्रमोद से भी इस कफतत्व का पोषण होता है। चरक ने कहा है—'आपोहिष्टामयो भुवस्ता न ऊर्जेदधातन'। कफ रूप में, जल हमें ऊर्जा देता है।

पित्ततत्व या देहाग्नि

कफ वृद्धि करता है, पित्त पक्ति या पचन करता है। यह अन्न का पाक करता, उसे मूल तत्वों में परिवर्तित करता है, जो मूलतत्व धातुओं को बनाते हैं यह धातुओं को पचाकर उनके मलों को अलग करता है, अर्थात् कफ 'उदक कर्मा' कहाता है, यह अग्नि कर्मा कहाता है। कफ बनाता है, यह तोड़ता है। दोनों के सम अवस्था में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहने से शरीर स्वस्थ रहता है। दोनों एक दूसरे के विरोधी हैं पर दोनों सन्तुलित रहें, सहयोग से काम करें तो शरीर ठीक रहता है। शरीर में जो सैकड़ों पाचक रस हैं वे इसी के कारण उत्पन्न होते एवं ठीक काम करते हैं। शरीर को उचित आहार मिले और उसका ठीक-ठीक पचन हो तो शरीर ठीक रहता है। देहाग्नि के कारण भूख प्यास लगती है। इसके द्वारा होने वाली रासायनिक क्रियाओं से जो ऊष्मा उत्पन्न होती उससे देह गर्म रहता है। शरीर में देहाग्नि ठीक-ठीक रहे तो यह मलों को पकाकर मलमूत्र, स्वेद, श्वास द्वारा बाहर कर देती है, जिससे त्वचा नेत्र आदि स्वच्छ दीखते हैं। मस्तिष्क में पित्त कर्म या पक्तिकर्म ठीक हो तो मन में शूरता, हर्ष, विचार स्वच्छता का भाव रहता है। चरक ने (चिकित्सा) में कहा है—"शान्तेऽग्नौम्रियते, युक्ते चिरं जीवत्यनामयः" अग्नि ठीक रहे तो आदमी चिरायु होता है। अग्नि की रक्षा के लिये आवश्यक है भोजन अधिक मात्रा में न लिया जाये। मधुर, अम्ल, लवण रस, गुरु, स्निग्ध, शीत आहारों का सेवन अधिक न किया जाये; कुछ उष्ण--गुण द्रव्यों का भी सेवन किया जाये, शारीरिक श्रम कुछ नित्य किया जाये, शरीर कफ से भी अधिक अग्नि पर आश्रित है। 'अग्निमूलं बलम् पुंसाम्" अर्थात् शरीर का बल इतना कफ पर नहीं जितना अग्नि पर आश्रित है। चरक (सू० २७) ने कहा है -"बलमारोग्यमायुश्च प्राणाश्चाग्नौ प्रतिष्ठिताः" अर्थात् बल, नीरोगता, आयु सब का मल कारण अग्नि है। अग्नि की प्रबलता मध्यआयु में रहती है। ६० वर्ष की आयु के बाद उसमें क्रमशः मन्दता आती जाती है। जिससे बढ़ती उमर में शीत, गुरु, स्निग्ध आहारों की मात्रा कम करनी होती है। थोड़ा शारीरिक श्रम जारी रखना होता है। सुश्रुत ने स्वस्थ आदमी का लक्षण कहते हुए कहा है—'समदोषः समाग्निश्च" अर्थात् देहाग्नि जब तक सम है, आदमी स्वस्थ है। अग्नि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को हम (consuming factor, catabolic factor या Fire of life) कहते हैं।

वायुतत्व

जैसे कफ वृद्धि का, पित्त पक्ति का कारण है वैसे वायु गति का कारण है। शरीर, मन की सब गतियों का कारण वायु है। हृदय-रक्त, रस, मांस आदि धातुओं-में जो गति हो रही है, मस्तिष्क को, इन्द्रियों को ठीक-ठीक विषयों की प्रतीति हो रही है, मन में जो हर्ष और उत्साह की उमंग है, शरीर से मलों को जो बराबर बाहर फेंका जा रहा है, सब वायु के कारण है। शारीरिक चेष्टाओं का कारण होने से 'वागतौ' धातु से इसे वायु या वात कहते हैं। जैसे सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, नक्षत्र, पाँचभौतिक वायु के कारण गति कर रहे हैं वैसे शरीर के सारे अंग शरीर गत इस विद्युत् (Electrical Potential या Dynamic energy) के कारण संचालित हो रहे हैं। चरक ने इसे शरीर की संचालक शक्ति कहा है तथा यह भी कहा है कि इसी पर आदमी की आयु निर्भर है—"वायुरायुर्बलं वायुर्वायुर्धाता शरीरिणाम्" (चि० २८) अर्थात् वायु इस शरीर का संचालक है। शरीर का बल आयु सब उस पर निर्भर है। चरक ने (सू० १२) कहा है—"वायुस्तत्रयन्त्रधरः" अर्थात् वायु इस शरीर रूपी मशीन की संचालक विद्युत् है, "प्रवर्तकश्चेष्ठानामुच्चावचानाम्" चरक ने इसे शरीर में होने वाली विविध चेष्टाओं का प्रवर्तक कहा है। चरक ने इसे "सप्राणः प्राणिनां स्मृतः" अर्थात् इसे प्राणियों का प्राण कहा है। 'वायुरायुर्बलं वायुः' यह भी चरक ने कहा है अर्थात् शरीर के बल और उसकी आयु वृद्धि का कारण भी वायु है। कफ के द्वारा शरीर का भरण-पोषण ठीक-ठीक हो, अग्नि सम अवस्था में अन्न, धातु, मल आदि का ठीक-ठीक पाक करे तो इस रासायनिक प्रक्रिया से जो एनर्जी उत्पन्न होती है, उससे वायु को बल मिलता है। उन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों से वायु को बल मिलता है और वायु से उन दोनों को बल मिलता है।

वनस्पतियों अर्थात् अन्न, फलों, सब्जियों में सूर्य से एक शक्ति आती रहती है और उनके अनाज, फल, पत्रों में कार्बोहाइड्रेट, फैट, या प्रोटीन के रूप में संचित होती रहती है। प्राणी में अन्न, फल, फूल आदि से वह कफ रूप में संचित होती है। अग्नि या पित्त के कर्म के द्वारा वह शक्तिरूप में बदलती है और शरीरस्थ वायु को बल देती है। इस प्रकार सारी शक्ति का स्रोत सूर्य है जो शरीर में अन्ततः वायु के रूप में बदल कर सर्व प्राणियों का संचालन करता है।[1]

---

१ सूर्यआत्मा जगतस्तस्थुशश्च (यजु० ७।४२); सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः (वेद), सूर्याद्वै इमानि भूतानि जायन्ते (सूर्योपनिषत्), आरोग्यंभास्करादिच्छेत् (प्रसिद्ध वाक्य)-ये सब वाक्यविज्ञानानुकूल हैं, अर्थात् हमारी शक्ति का स्रोत सूर्य है।

वनस्पतियों में शक्ति संचय :- वनस्पतियों में वायु से 6 Co_2 आता है। पानी से 6 H_2O। सूर्य रश्मियों से Energy आती है। मिलने से $C_6 H_{12} O_6$ बनता है। यह ग्लूकोज है। इसी से Fat बन जाता है। पहले Malic acid ($C_4 H_6 O_5$) जो मीठा-सा होता है। फिर Oxaloacetic acid ($cooH cH_2 co cooH$) वनता। फिर Acete acetic acid ($cH_3 co cH_2 cooH$) बन जाता है। इसीसे Fat बन जाता है। अर्थात् पहले Carbohydrate → Pyruvate → Oxalo acetate → Acetoacetate → Fats बनते। इस प्रकार वनस्पतियों में सूर्य की शक्ति से तेल बनते हैं। पौदे वायु तथा मिट्टी से (Nitrogen) भी लेते हैं। अपने अन्दर प्रोटीन्स बना लेते हैं। Fatty acid (Rcoo H) के एक H के स्थान पर NH_2 आ जाता है तो प्रोटीन बन जाता है। उदाहरणतः-Acetic acid ($cH_3 coo H$) के एक H के स्थान पर NH_2 आ जाता है तो वह

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कफ, पित्त सम अवस्था में रहें तो वायु को बल मिलता है। वायु सम रहे तो उन दोनों को बल मिलता है। इसीलिये 'समदोषः समा-

प्रोटीन C H_2 (NH_2) coo H बन जाता है जिसे Glycine कहते हैं। इस प्रकार हमें शक्ति देने वाले सारे आहार पदार्थ सूर्य की Photo synthetic energy से तैयार होते हैं।

पौदों के पत्तों में हरे रंग के सूक्ष्म वटन होते हैं, जिन्हें chloroplasts कहते हैं। इनका हरा रंग chlorophyll सूर्य किरणों के Red और Blue किरणों को पकड़ता है, शेष को छोड़ देता है। यह पत्तों की Captured energy है। इस शक्ति से जल की H उसमें समा जाती और O_2 उसमें से बाहर निकल जाती है। इसी कारण पौदे आस-पास की वायु में O_2 देते हैं। इसीलिये पौदे शीतकाल के अन्त में पत्र, पुष्प, फल आदि देने लगते हैं, जिनसे उनकी सूर्यप्रदत्त शक्ति हमें वायु के रूप में मिलती है।

हमारी त्वचा के नीचे की रक्तवाहिनियों में Cholesterol नामक फैट होता है; वह एक Sterolfat है, उस पर सूर्य की किरणों के पड़ने से इसमें विटामिन 'डी' उत्पन्न हो जाता है। अर्थात् विटामिन 'डी' भी हमें सीधा सूर्य किरणों की शक्ति से प्राप्त होता है।

Thiamine, Riboflavine, Nicotinicacid, Pyridoxine, Pantothenic acid, Cyano Cobalamin, Ascorbic acid, Folic acid, Vitamin A, Vitamin K, Tocopherol (Vitamin E)— ये सब विटामिन वनस्पतियों से प्राप्त होते और शरीर को शक्ति प्रदान करते हैं।

विटामिन्स के अतिरिक्त कुछ धातु (Minerals), जैसे—सोडियम पोटासियम, लोह, Magnesium, Manganese, Iodine, Fluorine, Cobalt, Selenium, Calcium, Phosphorus, Sulphur आदि भी हमें आहार द्रव्यों से प्राप्त होते हैं। ये सब शक्ति या शारीरिक वायु को बल प्रदान करते हैं। ये सूर्य की शक्ति के भण्डार हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्निश्च समधातुमलक्रियः" ऐसा सुश्रुत ने स्वस्थ का लक्षण किया है। यदि जीवाणु संक्रमण न हो, किसी विषद्रव्य का शरीर में प्रवेश न हो, शोक, चिन्ता, विषाद क्रोध आदि के आदेशों से बचा जाये तो यह वायु ७०-७५ वर्ष की आयु तक भी ठीक रहता है। इसके बाद यह कुछ मन्द होने लगता है। परन्तु यदि कफ को ठीक रखने के लिये गो दुग्ध, गोघृत से युक्त हलका भोजन थोड़ी मात्रा में किया जाये, अधिक आहार लेने से बचा जाये, थोड़ा शारीरिक श्रम नित्य किया जाये, शीत पेय के स्थान गर्म पेय लिये जायें, गर्म जल का सेवन विशेष किया जाये, अर्थात् अग्नि को सम रखा जाये तथा चित्त को सदा शान्त रखा जाये, क्रोध, निन्दा, विरोध, अतिभाषण, हिंसा शोक, चिन्ता, विषाद, अतिश्रम, भार उठाने से बचा जाये, रात्रि को ६-७ घंटे की निद्रा ली जाये, दिन में भी थोड़ा विश्राम किया जाये, नाना प्रकार के जो जीवाणु संक्रमण होते हैं, उनसे अपने को बचाया जाये, मद्य, मांस, तम्बाकू आदि मादक द्रव्यों के पान से बचा जाये, श्वास गहरे लिये जायें एवं वायु को सम अवस्था में रखा जाये तो आदमी चिरकाल तक स्वस्थ रह सकता है।

इस प्रकार कफ विसर्ग कर्म करता, पित्त आदान या पक्ति कर्म करता, वायु विक्षेप कर्म करता है।

सुश्रुत (सू० २) ने कहा है—'विसर्गादानविक्षेपैः सोमसूर्यानिला-यथा। धारयन्ति जगत्, देहं कफपित्तानिलास्तथा'।

ओज तथा तेज

इस प्रकार शरीर में होने वाले सारे भौतिक और रासायनिक कर्म अर्थात् शरीर का 'मेटाबोलिज्म' कफ, पित्त और वायु के स्वस्थ रहने पर निर्भर है। दूसरे शब्दों में आहार उचित हो उसका पाक ठीक हो, कार्बोज, फैट, प्रोटीन आदि से एनर्जी शरीर को मिलती रहे,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीनों मूल तत्व स्वस्थ हों, शरीर की धातुएँ निर्मल हों, शरीर के मल ठीक-ठीक निकलते रहें, तो शरीर को जो बल सामर्थ्य मिलता, त्वचा चेहरे आँखों में जो प्रभा दीखती है, मन में जो मेधा, बुद्धि, प्रसन्नता आती उसे ओज कहा है। सुश्रुत ने (सू० ११) में कहा है—'रसानां, शुक्रान्तानां धातूनां, यत्परं तेजः तत्खलुओजः तदेव बल-मुच्यते। बलेन स्थिरोपचितमांसता, स्वरवर्णप्रसादो बाह्याभ्यन्तर करणानामात्मकार्यप्रतिपत्तिर्भवति'। वाग्भट ने (सू० ११) कहा है—'ओजस्तुतेजो धातूनांपरम् स्मृतम्'।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकरण - ५

कफ पित्त तथा वायु के स्थान-भेद से नाम भेद

आयुर्वेद में तीनों धातुओं को शरीरव्यापी, सर्वशरीरचर कहा है, तथापि स्थानभेद से इनके नामों में भेद भी किया है।

कफधातु के भेद

फुफ्फुसगत या श्वासमार्ग में स्थित कफ को जो श्वास प्रश्वास के चलते रहने पर श्वासनालियों को सूखने नहीं देता, श्वासमार्ग को सदा आर्द्र रखता है तथा श्वास प्रश्वास के साथ आये जीवाणु आदि विषों को नष्ट भी करता है, शरीर का रक्षक होने से अवलम्बक श्लेष्मा कहा है।

आमाशय के अन्दर विद्यमान श्लेष्मा को, जो बाहर से आये शुष्क आहार का क्लेदन करता है तथा आहार के साथ आये जीवाणु आदि विषों को नष्ट करता है, उसे क्लेदक कफ कहा है।

मुख जिह्वा तालु गले आदि में स्थित कफ को, जो खाये-पिये आहारों के रस ज्ञान में सहायक है, उसे बोधक कफ कहा है।

मस्तिष्क में जो कफ, वात नाड़ियों को आर्द्र रखता है, उनके आसपास स्निग्धता रखता है, नाड़ियों का तर्पण करता है, उसे तर्पक कफ कहा है।

अस्थि संधियों के बीच तथा कंडराओं के आस-पास जो उनको संघर्ष से बचाता है, अस्थियों के बीच में स्निग्धता को बनाये रखता है, उसे श्लेषक कफ कहा है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पित्तधातु के भेद

आमाशय, पक्वाशय में जो अग्नि अन्न का पाचन करती है, अन्न को उसके मूल तत्वों में तोड़ती है, उसे पाचक कहा है।

रक्त के रंग को बनाने वाले पित्त को रंजक पित्त कहा है। यकृत में प्रोटीन्स बनते हैं। यकृत में लोहा भी रहता है। विटामिन्स 'बी$_{१२}$' भी यकृत् में रहता है। वहीं से रक्त के 'रेडसेल्स' बनते हैं। इसलिये यकृत् को रंजक पित्त का स्थान कहा है।

मस्तिष्क में बहुत ऐसे 'एन्झाइम्स' हैं, जो वहाँ पचन का काम करते हैं; उनके कारण विचार शक्ति, मेधा या ग्रहण शक्ति उत्पन्न होती है। मस्तिष्कगत विचार साधक अग्नि को साधक पित्त कहा है।

नेत्र के पिछले दृष्टिपटल 'रेटिना' पर किसी पदार्थ से आई किरणों के पड़ने से वहाँ जो फोटो केमिकल परिवर्तन होता है, जिससे वस्तु ठीक-ठीक दिखाई पड़ती है, उस परिवर्तन करने वाली अग्नि को आलोचक पित्त कहा है।

त्वचा में बहुत अधिक रक्त आता है और वहाँ एक रासायनिक कर्म होता है, जिससे त्वचा चेहरे आदि पर एक तेज या आभा झलकती है, इसे उत्पन्न करने वाली अग्नि को भ्राजक पित्त कहा है।

वायुधातु के भेद

मस्तिष्क में प्राण रूप में विद्यमान जो वायु विषयों को ग्रहण करती, बुद्धि को उत्पन्न करती, साथ ही श्वास को, अन्नादि को अन्दर लाती, उसे अन्दर लाने के कारण प्राण कहा है।

कण्ठ तथा फुफ्फुस में विद्यमान जिस शक्ति से आदमी बोलता है, गाता है, मेहनत करता है; इस उपर की ओर चेष्टा करने वाली वायु को उदान कहा है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोष्ठ में विद्यमान उस वायु को जो पाचक अग्नि को प्रेरित करती है, अन्न को पचाकर आगे धकेलती है, उसे अन्न को पाचक अग्नि से मिलाने के कारण समान वायु कहा है।

जो वायु वस्ति स्थान में स्थित होकर मलमूत्रगर्भ शुक्र आदि को प्रेरित कर बाहर करती है, उसे अपान वायु कहा है।

जो मस्तिष्क गत शक्ति ऐच्छिक, अनैच्छिक अनेकानेक मांस-पेशियों को चलाती है; जो सर्व चेष्टाओं का कारण है, उसे व्यान वायु कहा है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकरण-६

कफ-रोग

कारण

मधुर, अम्ल, लवण रस आहारों का अधिक मात्रा में सेवन किया जाये या दूसरे शब्दों में गुरु, स्निग्ध तथा शीत गुण भोजनों को अधिक मात्रा में लिया जाये, आहार को अधिक मात्रा में लिया जाये, उष्ण गुण द्रव्यों का सेवन न किया जाये, शारीरिक श्रम या व्यायाम को सर्वथा न करके आराम से जीवन बिताया जाये तो शरीर में कफतत्व बढ़ जाता है और अग्नितत्व मन्द हो जाता है। कफ तो केलोरीज़ देता है, अग्नि केलोरीज को खर्च करती है। जितनी केलोरीज़ ले उतनी खर्च भी हो जाये तो शरीर स्वस्थ रहता है। यदि वे आयें अधिक और खर्च कम हों, तब कहा जाता है कि कफ की वृद्धि हो गई है और अग्नि मन्द हो गई है। वस्तुतः अग्नि की मन्दता से जो रोग होते हैं उन्हें कफ रोग कहते हैं।

ऐसा लगता है कि जब अग्नि तो मन्द हो और भोजन द्रव्य अधिक मात्रा में लिये जायें तो उनसे कुछ अपूर्ण पक्वरस उत्पन्न हो जाते हैं और शरीर में तथा रक्त में बढ़ जाते हैं, इन्हें आयुर्वेद में आमद्रव्य, आमरस आदि नामों से पुकारा जाता है। सुश्रुत ने (सू० १५) कहा है-'श्लेष्मलाहार सेविनोऽध्यशनशीलस्य अव्यायामिनो दिवास्वप्नरतस्य आमएव अन्नरसः शरीर मनु क्रामति', अर्थात् भारी भोजन किया जाये और श्रम न करने से अग्नि मन्द हो तो शरीर में आमरस प्रसरण कर जाता है।

 CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निदान में माधव ने कहा है—'मन्दाग्नेर्निश्चलस्य स्निग्धं भुक्तषतो ह्यन्नं व्यायामंचाप्यकुर्वतः । वायुना प्रेरितो ह्यामो धमनीः प्रतिपद्यते। व्याधीनामाश्रयो ह्येष आमसंज्ञोऽति दारुणः' अर्थात् भारी भोजन किया जाये, श्रम न किया जाये तो भोजन के पूरी तरह न पचने से अग्नि की मन्दता से एक 'आमरस' उत्पन्न होकर रक्त में फैल जाता है। यह कफरोगों का कारण होता है। शरीर में आलस्य, तन्द्रालुता, मूत्र में कुछ मैलापन, अन्नारुचि, पेट में भारीपन, उद्गार शुद्ध न हो तो-ये आम के चिह्न होते हैं।

ऐसा लगता है कि कार्बोज भोजनों का पूर्ण पाक न हो तो कुछ एसिड द्रव्य, जैसे—पिरुविक एसिड, लैक्टिक एसिड रक्त में बढ़ सकते हैं।

फैट भोजनों का पूरा-पूरा पचन न हो तो शरीर में फैटीएसिड बढ़ सकते हैं। प्रोटीन भोजनों का पूर्ण पचन न हो तो यूरिया, यूरिक एसिड आदि की मात्रा शरीर में बढ़ सकती है। इसी तरह भोजन का ठीक-ठीक पाक न हो तो रक्त में शूगर, चर्बी की मात्रा बढ़ सकती है। इनके बढ़ने से जो नाना रोग उत्पन्न होते हैं, वे कफरोग या अग्नि की मन्दता से होने वाले रोग कहाते हैं।

ऐसी अवस्था में श्वासमार्ग आदि में शीघ्र जीवाणु संक्रमण हो जाने से शोफरोग या (Catarrh) के रोग हो सकते हैं या इस आमरस की अलर्जी से 'म्युकस मैम्ब्रेन्स' में त्वचा में स्नायुतन्तु (कनेक्टिवटिशू) में शोफ हो सकते हैं। टीकाकारों ने तो 'आमरस' या (Metabolites) को 'सर्वरोग प्रकोपक' कहा है। वाग्भट (सू० १३) ने कहा है—'अन्ये विषस्येव वदन्त्यामस्य संभवम्' अर्थात् आम को विष की तरह कहा है। सारांश यह है कि कफरोगों का कारण आयुर्वेद में अग्नि की मन्दता को कहा है। चरक ने (सू० २३) संतर्पण को कफरोगों का प्रधान कारण कहा है। चरक ने (सू० ८)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा है—'अग्निर्मेनापगच्छेच्छरीरात्' अर्थात् शरीर में अग्नि को क्षीण न होने दो। हृदय रोग जो व्यापक रोग है, चरक (सू० १७) ने कफ रोग कहा है—'अत्यादानं गुरुस्निग्धमचिन्तनमचेष्टनम् निद्रा-सुखं चाप्यधिकं कफहृद्रोगकारणम्'।

लक्षण

शरीर में मेदोवृद्धि हो, गुरुता, मन्दता, आलस्य, श्रम करने की अनिच्छा हो, शरीर की सामर्थ्य कम हो जाये, अंगों में भारीपन लगे, अन्न के लिये रुचि कम हो, मुख का स्वाद मीठा-सा रहे, मुँह से पानी आये, शीत अधिक लगे, गलशोथ, प्रतिश्याय, कास, श्वास हो, मूत्र में श्वेत रंग का द्रव्य आये, मूत्र में शूगर आये, मूत्रकृच्छ्र हो, मूत्राश्मरी हो, पित्ताश्मरी हो, तन्द्रानिद्रा दिन में होने लगे, त्वचा में अलर्जी होकर पामा, विर्चचिका, उदर्द, कण्डू कोठ हों, मांस में दर्द हो, उदर रोग या जलोदर हो, अर्श हो, आमवात, वातरक्त हो, मल अधिक निकले, गण्ड, ग्रन्थि, अर्बुद निकलें, भगन्दर हो, धमनी स्रोतों-रोध (Atherosclerosis) हो, मन्दाग्नि के कारण अतिसार हो, प्रवाहिका हो, मस्तिष्क में मन्दता आ जाये, दिमागी रोग हो तो—ये कफवृद्धि के चिह्न होते हैं।

कफरोगों की सामान्य चिकित्सा

पूर्ण लंघन या अर्धलंघन से कफरोग शान्त होता है। पूर्णलंघन में दो-तीन दिन रोगी को गर्म या शीत मधु मिश्रित निम्बुपानी पर रखें। अर्धलंघन में रोगी को किसी फल पर या दूध मिश्रित चाय पर पाँच-सात दिन रखें। किसी मौसमी फल पर आदमी एक सप्ताह रह सकता है। अगर दूध या चाय पर रखें तो चीनी न दें या उसे किसी उबली सब्जी पर और चाय पर रखें। लंघन के समय हलका भ्रमण कराना भी ठीक है। लंघन से तीन-चार मृदु विरेचनों से या

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नमक का १ सेर पानी पिलाकर वमन कराने से भी कफ दोष शान्त होता है या बिना घृत के किसी यूष के साथ ख़ुश्क रोटी आठ-दस दिन दें। गेहूँ के आटे में चतुर्थांश जौ का आटा मिला उसकी रोटी मूँग, मसूर के यूष के साथ एक-दो सप्ताह तक दें अथवा एक-दो मास के लिये चीनी तथा घृत का सेवन बन्द कर दें। दूध भी मलाई हटाकर ही दें। दूध में पिपली या छोहारा पकते समय डाल दें। चावल एक-दो साल पुराना ही दें। बिना चिकनाई के दूध में साँवक, कोदों आदि के चावल देवें। चीनी का प्रयोग बहुत कम कर दें। तक्र के साथ ख़ुश्क रोटी कुछ दिन तक दें। चरक (विमान १) ने कहा है कि उष्णद्रव्यों द्वारा विरेचन देने; कटु, तिक्त, कषाय रस रूक्षगुण आहार से भ्रमण व्यायाम आदि से लंघन करने, गर्म वस्त्र धारण करने से कफरोग शान्त होता है।

कफरोगों में औषध चिकित्सा

त्रिकटु चूर्ण, पंचकोलचूर्ण, चतुर्जातक चूर्ण, त्रिफला चूर्ण, केवल आँवला चूर्ण, तालिशादिचूर्ण, व्योषादि चूर्ण या वटी, मधुपिप्पली, गुलबनफ्शा, गुड पिप्पली, शिलाजीत, मरिचादिचूर्ण, लवंगादिचूर्ण, वैश्वानरचूर्ण—(सैंधव २, अजवायन ५, सोंठ ५, हरड़ १२ भाग), रसोन पिंड (शां० धं०), निम्बादिचूर्ण (निम्बपत्र १०, त्रिफला, त्रिलवण, दोक्षार प्रत्येक १, अजवायन ५ भाग) आरोग्यवर्धनींवटी, चन्द्रप्रभावटी, अग्नितुंडीवटी, कफकेतुवटी, अष्टकवटी, व्याघ्री-हरीतकी अवलेह, चित्रकहरीतकी अवलेह, अगस्त्यहरीतकी, दशमूल हरीतकी अवलेह, यकृदरिलोह, पंचतिक्तघृत गुग्गुल, महायोगराज गुग्गुल, कैशोर गुग्गुल, गोक्षुरादि गुग्गुल, गोमूत्र साधितमण्डूर, गोमूत्रपक्व हरीतकी चूर्ण, रामबाण रस। यवक्षार, सर्जक्षार, टंकण, वासाक्षार आदि कफहर हैं। अग्नितुंडी मन्दाग्निनाशक है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्नमार्ग-श्वासप्रश्वासमार्ग-मूत्रमार्ग-त्वचामार्ग-संधियाँ आदि जहाँ कफरोग हैं, तदनुसार उपर्युक्त औषधियों में से उपयोगी औषधि को चुन लेना चाहिये। उसका प्रयोग मासभर तो करके देखना चाहिये।

मधु—चरक (विमान १) ने कहा है—'मधुश्लेष्माणं जयति रौक्ष्यात् तैक्ष्ण्यात् कषायत्वाच्च। श्लेष्माहि स्निग्धोमन्दों विपरीतगुणश्च'।

कफरोगों के होने के काल तथा स्थान

दिन के प्रथम भाग तथा रात्रि के प्रथम भाग में, आयु के प्रथम भाग बाल्यकाल में, फाल्गुन-चैत्र के महीनों में अर्थात् वसन्तकाल में तथा आनूपदेश में जहाँ वृक्ष, वनस्पति तथा जल अधिक मात्रा में हों वहाँ तथा आहार लेने के बाद के एक डेढ़ घंटे के काल में कफ रोग ज्यादा होते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकरण - ७

पित्त - रोग

देहाग्नि की मन्दता से कफ रोग होते हैं। कुछ वायुरोग भी होते हैं। उन दोनों का वर्णन ऊपर हुआ है। पित्ताग्नि की वृद्धि से जो रोग होते हैं उनका उल्लेख यहाँ किया जाता है।

ज्वर सब से प्रमुख पित्तरोग है। "ज्वलयति इति ज्वर:" इससे पता लगता है कि ज्वर में शरीर का ताप मान बढ़ जाता है, त्वचा सूख जाती है, स्वेदन आने से शरीर का तापमान बढ़ा रहता है। ज्वर सदा किसी जीवाणु या उसके विष के शरीर में प्रवेश से होता है। ज्वर को जीवाणुओं के विपरीत शरीर की प्रक्रिया कहते हैं। अर्थात् ज्वर शरीर के बल का सूचक है वह जीवाणु के विपरीत लड़ सकता है। जीवाणु के प्रोटीन्स शरीर में टूटते हैं और उनका बिष शरीर में प्रवेश करता है तो रक्त के सीरम के प्रोटीन्स में एन्टिबौडीज़ उत्पन्न होते हैं। "गम्मा ग्लोब्युलिन" नामक प्रोटीन में ये एन्टिबौडीज रहते हैं, ये जीवाणुओं तथा उनके विष को नष्ट कर देते हैं, जिससे ज्वर उतर जाता है।

आयुर्वेद यह कहता है कि यदि ज्वर रोगी को गर्म कपड़ों में लपेट कर आराम से पड़ा रहने दें, वह कोई श्रम न करे, अपनी जीवनी शक्ति की रक्षा करे तो शरीर की पित्ताग्नि "एन्टिबौडीज़" के द्वारा जीवाणुओं को नष्ट कर सकती है और रोगी को ज्वर मुक्त कर सकती है। अतः पहले उसकी पित्ताग्नि को बढ़ाना चाहिये; एतदर्थ मृत्युंजय-वटी आदि का दिन में २-३ बार प्रयोग हितकर है। रोगी की शक्ति को बढ़ाने के लिए ज्वर के तीसरे चौथे दिन से उसे हलका, पर पोषक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई आहार देना चाहिये। आयुर्वेद में कहा है–"ज्वरितोहितमश्नीयात् यद्यप्यस्यारुचिर्भवेत्" उसे भोजन की रुचि नहीं हो तो हलका कोई आहार उसे देना चाहिये। भाव प्रकाशन ने कहा है—'ज्वरितोऽन्न-काले अश्नीयादेव, अर्थात् मूँग, मसूर, मोठ, कुलथी, परवल, गाजर, शलजम आदि का विनाघृत का यूष उसे थोड़ा-थोड़ा देते रहना चाहिये या मलबन्ध हो तो द्राक्षा, अंजीर से पकाया बिना चिकनाई का दूध एक-एक कप कई बार दें या जौ के पकाये जल से मिश्रित दूध दें। यदि कफ-पित्त ज्वर हो अर्थात् ज्वरमन्द हो, प्रवल न हो तो पिप्पली या बनपशा से पकाया चिकनाई रहित दूध थोड़ा-थोड़ा कई बार दें या देशी चाय ने बनाया दूध दें। द्राक्षा, मौसमी, अनार, सन्तरे आदि का रस भी दें। पुराने चावलों के आटे से बनी दूध की पेया भी दें। पीने के लिए जल की मात्रा बहुत दें। कफ का मिश्रण हो तो प्राय: ज्वर रोगी को गर्म जल दें या गर्म चाय दें। चीनी का प्रयोग बहुत कम करें। नारियल का पानी भी देने से रोगी को बल मिलता है। रोगी के बल को बढ़ाने के लिये उसे मुक्ता तथा प्रवाल एक-एक रत्ती रोज देवें या काम-दूधारस २ रत्ती दिन में एक-दो बार दें। खमीरा मरवारीद या दवाल मुश्क दें। आयुर्वेद का मत है कि यदि ज्वर रोगी की शक्ति को आहार, औषध, जलपान तथा आराम से बढ़ाया जाये तो पित्ताग्नि के द्वारा उसके रक्त में "एन्टिबोडीज़" उत्पन्न होकर आगन्तु जीवाणु को नष्ट कर देते हैं और रोगी ज्वरमुक्त हो जाता है।

तीव्रशोथ या विद्रधि—का रोग चोट लगकर किसी जीवाणु के त्वचा में प्रविष्ट होने से उसके विपरीत जो पित्ताग्नि की प्रतिक्रिया होती है, उससे विद्रधि होती है। बाहर से प्रविष्ट जीवाणु द्वारा कुछ स्थानिक सेल नष्ट होते हैं। उनके विपरीत वहाँ बहुत सा रक्त आता है, वह स्थान सूज जाता है, लाल हो जाता है। शरीर की रक्षा करने के लिये वहाँ श्वेतकण भारी मात्रा में जमा हो जाते हैं। श्वेतकणों में से पौलिमार्फ नामक श्वेतकण तो जीवाणु को नष्ट करते हैं तथा श्वेतकणों

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से लिम्फोसाइट्स जीवाणु को फैलने से रोकते हैं और जो अंग नष्ट हो गया है उसके रोहण का भी काम करते हैं। अभिप्राय यह है कि स्थानिक पित्त प्रकोप भी जीवाणु से शरीर की रक्षा के लिये होता है। इसीलिये गर्म सेक तथा अलसी, तिल, कुष्टचूर्ण, लवण, तेल, आटे आदि से बनी गर्म पोल्टीस ही बाँधी जाती है ताकि वहाँ पित्ताग्नि को बल मिले साथ ही त्रिफला, गुग्गुलु या सप्तविंशतिक गुग्गुलु की गोलियाँ देकर पित्त को बढ़ाया जाता है।

अम्लपित्त रोग भी एक पित्त प्रधान रोग है, उसके लिये आमाशय में बढ़े पित्त के शमन के लिये आमलकी रसायन, आमलकी चूर्ण किसी को मधु से चटायें। प्रातः निम्बपत्र स्वरस दें या निम्बपत्रचूर्ण दें। तिक्तघृत दें, आँवले का स्वरस दें। धात्रीलोह दें। अविपत्तिकरचूर्ण या लीलाविलास रस दें।

कामला एक पित्तरोग है। आँवले के स्वरस में या चूर्ण में मधु मिला कर दें। महातिक्त घृत दो चार दिन दें। त्रिफला चूर्ण मधु से दें।

रक्तपित्त रोग में दूर्वादिघृत दें। द्राक्षाक्वाथ में मधु मिलाकर दें। वासारस मधुमिश्रित दें। गूलर फल के रस को मधु से चटायें। हरड़ के चूर्ण को शहद से कई बार दें।

चरक ने (वि॰ ६) कहा है—घृत पान करने, रेचन लेने, मधुर तिक्त कषाय रस से, शीतगुण आहार तथा औषध द्रव्यों के लेने, गरमी से बचने से पित्त रोग शान्त होते हैं।

पित्तवृद्धि के काल तथा स्थान

दिन के मध्य में, रात्रि के मध्यकाल में, आश्विन-कार्तिक के महीनों में, आयु के मध्यम काल में, भोजन करने के एक-डेढ़ घण्टे बाद, पित्तकर्म स्वभावतः अधिक होता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकरण - ८

वायु – रोग

चरक ने कहा है—"वायुर्मे प्राणानादधातु" वायु शरीर का बल है, प्राणतत्व है, जीवनीयतत्व है, इस शरीररूपी मशीन का चलाने वाला विद्युत् तत्व है। उसकी क्षीणता शरीर में हो या किसी अंग में हो तो उससे जो लक्षण होते हैं, उसे वायुरोग कहते हैं। स्पष्ट है कि यदि शरीर को पोषक आहार बहुत दिन न मिले या यदि दीर्घ लंघन किया जाये तो शरीर में वायु रोग हो सकता है। दूसरे आयु के बढ़ने के साथ-साथ शरीर का प्राणतत्व उत्तरोत्तर निर्बल होता है; उदाहरणतः नई विद्या, नई कला को सीखने की शक्ति ४० वर्ष के बाद कम होने लगती है, दृष्टिशक्ति, श्रवणशक्ति ५० वर्ष की आयु के बाद कम होने लगती है। ६०-७० वर्ष की आयु के बाद दूसरी शारीरिक शक्तियाँ भी कम होने लगती हैं। शरीर की देहाग्नि मन्द हो जाये और आहार कम न किया जाये तो रक्त में आमद्रव्य या आमविष भी बढ़ने लगता है, उससे भी वायु रोग होते हैं। स्नायु तन्तु में आम विषों की अलर्जी से आमवात रोग होता, पैरों के जोड़ों में यूरिक एसिड के बैठने से वातरक्त रोग होता है। इसी प्रकार रक्त में शूगर के, फैट के, यूरिया आदि के बढ़ने से रोग होते हैं। ये विष के समान शरीरस्थ वायु को क्षीण करने का कारण होते हैं। तम्बाकू, मद्य, भाँग आदि मादक द्रव्यों के सेवन करते रहने से शरीर का प्राणतत्व क्षीण होता है। फेफड़ों में मूत्र मार्ग में कोई जीवाणु जनित रोग या इनफैक्शन बना रहे तो भी शरीर का वायु क्षीण होता है। सबसे अधिक चिन्ता, शोक, विषाद, भय, व्याकुलता आदि मानसिक आघात वायु की क्षीणता

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का कारण है। इन आघातों से रक्त में कोई विषद्रव्य बढ़ता है जिससे प्राणतत्व निर्बल होता है। शरीर पर यदि कोई भारी चोट लग जाये तो भी शरीर का प्राण क्षीण हो जाता है अथवा शारीरिक शक्ति की अपेक्षा अत्यधिक शारीरिक श्रम किया जाये तो भी शरीर की स्वाभाविक शक्ति निर्बल हो जाती है।

लक्षण

शरीर की मांसपेशियों आदि में दर्द हो, आमवात हो, पैरों में वातरक्त हो, कटिशूल, स्कन्ध शूल आदि हों, कपाल की मांसपेशियों में अर्धावभेदक या माइग्रेन का दर्द हो, कमर की मांसपेशियों की निर्बलता से कुब्जता हो, ग्रीवा की मांसपेशियो में स्तम्भ हो अर्थात् मन्यास्तम्भ हो आँख नाक, कान आदि इन्द्रियों की शक्ति में ह्रास हो रहा हो, शाखाओं की माँसपेशियों की निर्बलता से गति में विषमता हो, आँत में निर्बलता से आन्त्रशूल आध्मान हो, आँत को रोकने वाली माँस पेशियों की निर्बलता से आँत उतर जाये अर्थात् आन्त्र वृद्धि हो, बड़ी आँत की निर्बलता से मल बन्ध हो, गुदा की निर्बलता से गुदभ्रंश हो, गर्भ की निर्बलता से गर्भ ठहर-ठहर कर गिर जाये, शुक्र नाड़ी की निर्बलता से शुक्र शीघ्र स्खलित हो जाये, शरीर की प्रतिरोधक शक्ति की निर्बलता से शीत या उष्ण जल्दी लग जायें या श्वाँस नाली आदि में जीवाणु संक्रमण जल्दी हो जाये, वात नाड़ियों की निर्बलता से हाथ पैर की अंगुलियों में झनझन होने लगे, मस्तिष्क की निर्बलता से निद्रा कम हो जाये, क्रोध, व्याकुलता, शोक, दुःख का वेग हो जाये, मन में उत्साह, धैर्य, सहन शीलता, शान्ति की कमी हो जाये, हृदय की निर्बलता से स्वल्प श्रम से ही श्वास फूल जाये या छाती में शूल हो जाये या पैरों में ऐसा उभार हो जो दबाने से दब जाये या सिर में चक्कर आये, त्वचा में शुष्कता, रुक्षता, कृष्णता हो जाये या त्वचा से छिलके झड़ने लगें, अस्थियों के निर्बल हो जाने से उनमें

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोड़ी चोट से भंग या फ्रैक्चर हो जाये तो इन सबको वायु रोग कहते हैं।

आशय यह है कि शरीर में किसी प्रकार की क्षीणता हो अर्थात् लघुता, रुक्षता, खरता, चलता, स्तब्धता, कृशता, निर्बलता, शूल, वेदना, संज्ञाशून्यता, उत्साह हीनता, चिन्ता शीलता, अतिसंज्ञाशीलता, आदि हो तो उसे वायु रोग कहा जाता है।

चिकित्सा

शरीर की शक्ति कम करने वाले कारणों का निराकरण करना चाहिये तथा शरीर की स्वाभाविक शक्ति को बढ़ाने का उपाय करना चाहिये। अग्नि की मन्दता को हटाने के लिये रोगी को हलका, पर पोषक आहार देना चाहिये। शरीर में कोई इनफैक्शन हो तो उसे हटाना चाहिये। रक्त के अन्दर कोई विषद्रव्य कारण हो तो विरेचन औषध को ३-४ दिन के अन्तर से देना चाहिए। विरेचन से पहले वाह्याभ्यन्तर स्नेहन करके वाष्पस्वेदन कराना चाहिये, जिसे ४-५ दिन के अन्तर से ४-५ बार कराना चाहिए। विरेचन के बाद वस्ति-कर्म दूसरे-तीसरे दिन करायें। रोगी को हलके पोषक आहार पर रखकर उसके शरीर का शोधन होना चाहिए। शोधन से निर्बलता न हो इसका ध्यान रखना चाहिए। चने के आटे से मिश्रित गेहूँ के आटे की रोटी घृत मिश्रित यूष के साथ दें, गाय का दूध, तक्र आदि से रोटी दें। इसे फलों पर विशेष रखें, नींद ठीक आये इसका यत्न करें। हलका भ्रमण भी रोज करायें। रोगी का रक्त शुद्ध हो और उसके शरीर की शक्ति बढ़े, पाचन अग्नि बढ़े, बाह्याभ्यन्तर स्नेहन हो, इसका ध्यान रखना चाहिए। तम्बाकू आदि का त्याग कराना चाहिए। रक्त में शूगर हो, उसमें वसा अधिक हो तो चीनी, घृत का त्याग करें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वायु रोग शामक कुछ औषधियों का उल्लेख किया जाता है। विचार करके भिन्न-भिन्न रोगों में इनमें से किसी उपयुक्त औषधियों का चिरकाल तक प्रयोग करना चाहिए।

उदाहरणतः दर्दों में महायोगराज गुग्गुल, रास्ना सप्तक, अजमोदादिचूर्ण, रसोनपिंड (शा० ध०); हृदय आदि की सर्वशरीर की निर्बलताओं में वृहद् वातचिन्तामणि, खमीरा मरबारीद, जवाहरमोहरा, दवालमुश्क, च्यवनप्राश, आमलकी रसायन; दुर्बलता, कृशता, वन्ध्यत्व आदि में दशमूलारिष्ट; सभी वातरोगों में नारायण तेल का अन्तः तथा बहिः प्रयोग, शतावरी घृत (गदनिग्रह) वातरोगोक्त वृहच्छागलादि घृत (निरामिष); श्वास, पुरानी खाँसी में चित्रक हरीतकी, दशमूल हरीतकी; शोथ में भी अगस्त्यहरीतकी, दशमूलहरीतकी; स्त्रियों के गर्भ सम्बन्धी निर्बलता में फलघृत; नाना प्रकार के कठिन वातरोगों में निरामिष वृहच्छागलादिघृत; मानसरोगों में ब्राह्मीघृत, अश्वगंधारिष्ट, ब्राह्मीवटी; सर्व निर्बलताओं में चन्द्रोदय, मकरध्वज वटी, (भै० र०) त्वचा के कठिन रोगों में पंचतिक्तधृतगुग्गुलु; नेत्र के कठिन वातरोगों में महात्रिफलाघृत, साधारण वातरोगों में त्रिफला पिप्पली चारों समान करके चूर्ण को घृत, मधु के साथ दें, आन्त्रवृद्धि, आन्त्रशूल में हिंगुत्रिगुण तेल; (वाग्भट गुल्मे) पुंस्त्वशक्ति की निर्बलता में मूसलीपाक (मूसली १ किलो, चीनी ढाई किलो, गोखरू, तालमखाना, कौंच बीज, शतावरी, लौंग, जायफल तगर, इलायची छोटी, बादामगिरी, पिस्तागिरी, २५-२५ ग्राम) हृदय शूल में रसोनपिण्ड (शा० ध०), हिंगु आदि चूर्ण (हींग १, काला नमक २, सोंठ ४, हरड़ ८ भाग), वैश्वानर चूर्ण (सैन्धव २, अजवायन ५, सोंठ ५, हरड़ १२ भाग चूर्ण), सप्तविंशतिक गुग्गुलु चन्द्रप्रभावरी-त्रिफला उपयोगी है। रोगी को रोटी, तक्र, फलों पर ही रखें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरक ने कहा है—तेलों द्वारा स्नेहन करने, स्वेदन लेने, शरीर का मृदुशोधन करने, स्निग्ध, उष्णगुण; मधुर, अम्ल लवण-रस भोजन लेने, तेलमर्दन, गर्मपोल्टीस या बोतल रखने, गर्म स्नान करने, बलप्रद घृतों के लेने, वस्तियों के लेने से, आराम करने से वायुरोग शान्त होते हैं।

वायुरोगों के होने का काल तथा स्थान

दिन के अन्तिम भाग में, रात्रि के अन्तिम भाग में, साल के आषाढ़-श्रावण-भाद्रपद महीनों में, आयु के पिछले भाग-वृद्धावस्था में, जांगल देश या शुष्क देश में वायुरोग ज्यादा होते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकरण - ६

कफक्षय जनित रोग

कफवृद्धि से होने वाले रोगों का ऊपर वर्णन हुआ है। कफतत्व या बुद्धितत्व के क्षय या न्यूनता से भी अनेक रोग होते हैं जिन्हें "डेफिशियेन्सी" रोग कहते हैं। चरक ने इन रोगों को अपतर्पण जनित रोग कहा है और कहा है कि इनमें देह का बल क्षीण हो जाता है, अग्नि बल क्षीण हो जाता है, माँस आदि धातुओं का पोषण मन्द हो जाता है। रोगी की दर्शन-श्रवण आदि शक्तियाँ घट जाती हैं, हृदय निर्बल हो जाता, मल-मूत्र ठीक नहीं आते, शरीर के अंगो में दर्द रहता और प्रायः वायु रोगों के लक्षण हो जाते हैं।

उदाहरणतः शिशुओं में माँ का दूध छूट जाने के बाद गरीब शिशुओं को प्रोटीन भोजन कम मिलता है तो वे अति कृश होते जाते हैं, उनको (Marasmus) रोग हो गया है, ऐसा कहा जाता है। इसी तरह छोटे शिशुओं को माँ का दूध छूटने के बाद दूध न मिले तो विटामिन "डी" की न्यूनता से उनकी अस्थियों का पोषण कम होता है, जिससे वे नरम हो जाती हैं; इसे Rickets का रोग कहा जाता है। इसी तरह बड़ी आयु में यदि फल न मिलें तो विटामिन 'सी' की न्यूनता से नासिका आदि से रक्तस्राव होने लगता है अर्थात् रक्तपित्त रोग हो जाता है। यह भी कफक्षय का सूचक है। यदि बड़ी आयु में मखन, दूध आदि द्वारा विटामिन 'ए' न मिले तो रात को अंधेरे में देख सकने की शक्ति कम हो जाती है, यह रोग भी अपतर्पण का सूचक है। इसी तरह जिन स्थानों पर आयोडीन वाला कोई आहार नहीं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलता, लोगों को गिल्हड़ का रोग हो जाता है। इसे भी अपतर्पण-जनित ही समझना चाहिए। दस्तों द्वारा शरीर से बहुत सा जल निकल जाये तो यह भी कफक्षय का सूचक है।

चरक ने (सू० २३) कहा है—यदि अपतर्पण सूचक लक्षण हो तो दूध, पनीर, घृत, तैल, मधु, सत्तु, द्राक्षा, खजूर, अनार, इमली, निम्बु, आँवला, फालसा आदि फलों के स्वरस अर्थात् हलके, पर पौष्टिक आहार देने चाहियें। सुश्रुत ने कहा है कि गिल्हड़ होने लगे तो सामुद्र-लवण का प्रयोग करें। यदि वमन और अतिसार अधिक हो जायें, इससे शरीर में कफतत्व क्षीण हो जाये तो ऐसे रोगी को एक लीटर जल में नमक ३½ ग्राम, सोडा खाने वाला २½ ग्राम, पोटासियम क्लोराइड १½ ग्राम, ग्लूकोज २०० ग्राम मिलाकर थोड़ा-थोड़ा यह जल बराबर मुख द्वारा देते रहें। इससे कफ क्षय कम हो जाता है; शरीर का कफतत्व बढ़ता है। चरक ने लवणयुक्त फल रसों के या लवणयुक्त द्राक्षा के क्वाथ के देने का विधान किया है।

इस प्रकार आयुर्वेद के मत में सर्वरोगों का कारण वात-पित्त-कफ इन तीन तत्वों की विषमता ही है। सुश्रुत ने (सू० २४) कहा है—'सर्वेषां व्याधीनां वातपित्तश्लेष्माण एव मूलं तल्लिङ्गत्वात्, दृष्टफलत्वात्, आगमाच्च। तथाहि कृत्स्नं विकार जातं सत्वरजस्तमांसि न व्यतिरिच्यन्ते एवमेव कृत्स्नं विकार जातं अव्यतिरिच्य वातपित्त-श्लेष्माणोवर्तन्ते'। अर्थात् सर्वरोगों का मूल कारण वात, पित्त, कफ की विषमता ही है।

आधुनिक चिकित्सा, लक्षण विपरीत चिकित्सा पर बल देती है तथा शरीर रूपी भूमि में प्रविष्ट जीवाणु रूपी बीज के निराकरण पर बल देती है। आयुर्वेदिक चिकित्सा दोष दूष्य और निदान विपरीत चिकित्सा है, (च. चि. ३०।२९२) यह शरीर के धारक तीन तत्वों को ठीक करने का यत्न करती है, उनके ठीक होने से लक्षण स्वयं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्त हो जाते है। वे ठीक होकर बाहर से आये जीवाणु का निराकरण भी कर देते हैं। देह रूपी भूमि स्वस्थ हो तो रोग जीवाणु ज़्यादा पनपता नहीं, वह कुछ पनपने भी लगे तो शरीर के धारक तत्व उसे नष्ट कर देते हैं। अतः शरीर के धारक तीन तत्वों को समअवस्था में लाने का या समअवस्था में रखने का ही उद्देश्य आयुर्वेद का होता है। वैद्य लक्षण को शान्त करता है, पर शरीर की धारक धातुओं और दूष्यों को समअवस्था में लाने पर विशेष बल देता है। रोग प्रायः अग्नि अथवा शरीर की प्राणशक्ति 'वाइटैलिटी' की मन्दता से होते हैं, अतः वैद्य एक तो देहाग्नि को बढ़ाने तथा दूसरे शरीर की प्राणशक्ति अथवा बल या रोग प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाने का यत्न करता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकरण – १०

प्रकृति

कफ-प्रकृति

यदि जन्म से मनुष्य में कफतत्व प्रबल हो अर्थात् वृद्धितत्व अधिक सक्रिय हो तो उसके शरीर का पोषण कर्म प्रबल होता है, जिससे शरीर में गुरुता, मेदस्विता, स्थिरता, स्निग्धता, सहनशीलता के लक्षण विशेष होते हैं। शरीर स्थूल, सुडौल, सुन्दर, और भरा हुआ होता, सिर बड़ा, छाती चौड़ी, कन्धे मोटे, शरीर बलवान् होता, ग्रीवा छोटी होती, शरीर भारी पर विशेष ऊँचा या नीचा नहीं होता। उसकी गतियाँ स्थिर तथा मन्द होती हैं। शरीर के बलवान् होने से वह शीत, उष्ण, भूख, प्यास को सहन कर लेता है। उसकी आवाज ऊँची व सुरीली होती है।

उसके मस्तिष्क का पोषण ठीक होने से वह बुद्धिमान, विचारशील होता है। वह जल्दी से विक्षुब्ध या क्रुद्ध नहीं होता। किसी विद्या या कला को जल्दी सीख लेता है। धनोपार्जन में भी समर्थ होता है। व्यवहार में कुशल होता है। वह अपने सब कामों में सफल होता है।

हाँ, यदि वह संतर्पण अधिक करे, आराम से रहे, श्रम न करे, तो उसमें अग्नि की मन्दता से होने वाले कफ रोगों के होने की आशंका रहती है।

पित्त-प्रकृति

यदि जन्म से ही मनुष्य में अग्नितत्व की प्रधानता हो अर्थात् पक्तिकर्म प्रबल हो, कफकर्म मन्द हो, तो ऐसे व्यक्ति का शरीर न स्थूल और मन्द होता, ना ही अधिक कृश होता है। मध्यम आकृति

 CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का होता है। उसमें अन्न पाक, धातु पाक, मल पाक ठीक होता है अतः उसको भूख प्यास अधिक लगती है। उनके मुख, नेत्र, त्वचा, आदि अधिक स्वच्छ, चमकदार होते हैं। केश मृदु होते, अधिक नहीं होते। मल-मूत्र-स्वेद खुलकर आते हैं। कफ प्रकृति वाले की अपेक्षा वे अधिक सक्रिय, गतिशील, सचेष्ट होते हैं।

पित्ताग्नि की तीव्रता के कारण उनकी बुद्धि, स्मृति, विचार शक्ति तीव्र होती है। तर्क-वितर्क, युक्ति-प्रत्युक्ति में प्रत्युत्पन्न मति होते हैं। वे अच्छे वक्ता भी होते हैं। वे भयभीत नहीं होते,उनमें शूरता, तीव्रता विशेष होती है। उनको गरमी सहन नहीं होती,अधिक गरम आहार; पेय भी अनुकूल नहीं होते।

वायु-प्रकृति

यदि जन्म से ही शरीर का प्राणतत्व, जीवनीय तत्व, शरीर का संचालन करनेवाला विद्युत तत्व (Electical Potential) निर्बल हो अर्थात् शरीर का मूलभूत बल कम हो तो उनका पोषण कम होने से शरीर कृश, रुक्ष, निर्बल होता है। आवाज भी निर्बल होती, आहार कम होता है। अंगों में लघुता, रुक्षता के लक्षण होते हैं। शरीर में चलता का लक्षण विशेष होता है। वह अधिक भाषणशील होता है। शीत पेय तथा शीत को सहने की शक्ति कम होती है। श्रम सहन नहीं होता।

मन में भी प्राणतत्व की निर्बलता के कारण उनके विचार दृढ़ नहीं होते, अस्थिर होते हैं। क्रोध, भय, शोक, चिन्ता, विषाद, राग, द्वेष के भाव उनमें जल्दी हो जाते हैं। शान्ति, सहन शीलता के भाव कम होते, निद्रा भी कम होती है। स्मरण जल्दी हो जाता, जल्दी भूल भी जाता है। उनमें निर्बलता, अस्थिरता के लक्षण विशेष होते हैं। उनमें वायु रोग सुगमता से हो जाते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकरण-११

आयुर्वेदिक स्वस्थवृत्त

कफ शरीर में वृद्धिकर्मा है। पित्त शरीर में पक्तिकर्मा है। कफ-तत्व मधुर, अम्ल, लवण रसों, गुरु, स्निग्ध, शीत गुण द्रव्यों से पनपता है। पित्ततत्व अम्ल, लवण, कटु रसों, उष्ण, तीक्ष्ण गुण आहारों तथा शारीरिक श्रम से उत्तेजित होता है और अन्न का, धातुओं का ठीक-ठीक पाक करता है। दोनों विरोधीतत्व सन्तुलित अवस्था में रहें, सहयोग से काम करें तो शरीर स्वस्थ रहता है। दूसरे शब्दों में शरीर में आय और व्यय लगभग सम रहें तो शरीर नीरोग रहता है। इन दोनों को सन्तुलित किस आहार-विहार से रख सकते हैं ? इसका एक उदाहरण यहाँ दिया जाता है।

शरीर में आय का विवरण

गेहूँ, चावल, चना आदि अन्न दिन में १४ औंस (४२० ग्राम) मात्रा में लिया जाये तो इससे शरीर को १४०० कैलोरीज प्राप्त होती है क्योंकि १ औंस अन्न १०० कैलोरीज देता है।

दाल २ औंस (६० ग्राम) ली जाये तो वह शरीर को २०० कैलो-रीज देती है क्योंकि उसका १ औंस १०० कैलोरीज देता है।

सब्जी ४ ओंस (१२० ग्राम) ली जाये तो वह ५० कैलोरीज देती हैं क्योंकि उसका १ औंस १२ कैलोरीज देता है।

दूध १६ औंस (४८० मिलीलिटर) लिया जाये तो वह ३२० कैलोरीज देता है क्योंकि उसका १ औंस २० कैलोरीज देता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लस्सी १० औंस (३०० मिलीलिटर) ली जाये तो वह १५० कैलोरीज देती है क्योंकि उसका १ औंस १५ कैलोरीज देता है।

घृत १ औंस २०० कैलोरीज देता है।

चीनी १ औंस ११५ कैलोरीज देती है।

इस प्रकार आहार से आदमी को दैनिक २५०० के लगभग कैलोरीज मिलती हैं।

अब यदि यही व्यक्ति देहाग्नि को ठीक रखने के लिये साधारण व्यायाम १ घं० दैनिक करे तो वह २५० कैलोरीज खर्च करता है यदि वह ५५ किलो ग्राम भार का है। क्योंकि १ घं० की हलकी व्यायाम से प्रति घंटा प्रतिकिलोग्राम ४·५ कैलोरीज खर्च होती है।

यदि वह सुबह-शाम दिन में २ घंटा भ्रमण करता है तो वह २७५ कैलोरीज खर्च करता है क्योंकि वह साधारण भ्रमण में प्रतिघंटा प्रतिकिलोग्राम २·५ कैलोरीज खर्च करता है।

अब यदि वह अपना दैनिक कार्य ८ घं० करता है तो ८८० कैलोरीज खर्च करता है क्योंकि साधारण श्रम के कार्य करने में आदमी प्रतिघंटा प्रतिकिलोग्राम २ कैलोरीज खर्च करता है।

शेष रहा टट्टी जाना, स्नान करना, कपड़े बदलना, पत्र आदि पढ़ना इनमें यदि वह ५ घंटे काम करता है तो वह ४१२ के लगभग कैलोरीज खर्चता है क्योंकि साधारण कार्य में आदमी प्रतिघंटा प्रतिकिलोग्राम १·५ कैलोरीज खर्चता है।

अब यदि वह सोने में ८ घंटे लगाता है तो उसमें वह ४१० कैलोरीज खर्च करता है क्योंकि नींद में आदमी प्रतिघंटा प्रतिकिलोग्राम १ कैलोरीज से कुछ कम खर्च करता है।

इस प्रकार दैनिक श्रम में वह २२२५ कैलोरीज के लगभग खर्च करता है अर्थात् जितनी कैलोरीज की आय है उतनी कैलोरीज का व्यय भी है, ऐसे व्यक्तियों में क़फ और पित्त सम अवस्था में विद्यमान

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, ऐसा कहा जाता है। पित्त या देहाग्नि ठीक रहे तो शरीर में एनर्जी भी ठीक उत्पन्न होती है एवं शरीर के वायुतत्व को भी बल मिलता है। ऐसा व्यक्ति किसी तम्बाकू, मद्य आदि मादक द्रव्य का सेवन न करता हो एवं हर प्रकार के इनफैक्शन से अपने को बचाये तो उसे स्वस्थ कहा जाता है। स्वस्थ रहने के लिये भोजन द्वारा जितनी कैलोरीज ली जायें, शारीरिक श्रम द्वारा लगभग उतनी कैलोरीज का खर्च भी होना चाहिये।

भोजन सम्बन्धी स्वस्थ वृत्त

आयुर्वेद ने अपक्व और पक्व दोनो आहरों के लेने का विधान किया है। फलों और मूली;गाजर, टमाटर आदि के लेने से मनुष्य को विटामिन्स मिल जाते हैं। मलबन्ध का रोग नहीं होता। पक्व आहार के सम्बन्ध में चरक ने (विमान१) कहा है कि भोजन ताजा और गर्म और स्निग्ध गुण होना चाहिये। पिछले भोजन के ठीक पच जाने पर ही दूसरा भोजन लेना चाहिये। भोजन में अति शीत पेय नहीं लेना चाहिये। बहुत जल्दी में नहीं करना चाहिये। तन्मय होकर करना चाहिये, भोजन करते समय वातचीत करना, हँसना नहीं चाहिये, भोजन उतनी मात्रा में लेना चाहिये जो अपने को अनुकूल हो। मात्रा वही ठीक है जिसके लेने से अपना कार्य करने तथा गमनागमन में किसी प्रकार की असुविधा न हो।

सुश्रुत ने (सू० ४६) कहा है कि भोजन रोज के नियत समय पर ही लेना चाहिये, पहले या पीछे कभी न लेना चाहिये। किसी कारण भोजन का समय निकल गया हो तो भोजन नहीं लेना चाहिये क्योंकि समय निकल गया, घंटा ऊपर हो गया हो, तो अग्नि फिर शान्त हो जाती है। असमय में किया भोंजन ठीक जीर्ण नहीं होता। समय से पहले भी भोजन नहीं लेना चाहिये। पड़े हुए भोजन को या वासी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन को गर्म करके कभी नहीं लेना चाहिये। रात्रि को भोजन के बाद थोड़ा विश्राम करके १०० कदम चलके तब सोना चाहिये। चरक, सुश्रुत दोनों ने कहा है कि जब मन व्याकुल हो, चिन्तित हो, शोकाकुल हो, क्रुद्ध हो, अशान्त हो तो भोजन नहीं लेना चाहिये। जो भोजन अतिस्निग्ध हो, अतिगुरु हो, अतिशीतल हो, अति विदाही हो, उसे नहीं लेना चाहिये। यदि कहीं बाहर दूर तक सफर करना है तो उससे पहले भोजन नहीं करना चाहिये। आयुर्वेद में प्रातः सायं २ बार ही भोजन का विधान है। मधुर,अम्ल,लवण, कटु रस आहार तो सभी लेते हैं इनके साथ तिक्त और कषाय रस आहार भी कभी-कभी लेने चाहिये। तिक्त रस के लिये निम्ब पत्र रस, गुडुची कषाय,चिरायता क्वाथ, करेला आदि का सेवन कभी-कभी करना चाहिये। कषाय रस के लिये त्रिफला की सब्जी भी सप्ताह में एकबार ले लेनी चाहिये। चरक ने तो (सू० २५) कह दिया है कि 'सर्वरसाभ्यासोबल कराणाम् श्रेष्ठम्'—अर्थात् षड्रस भोजन से बढ़कर कोई बलवर्द्धक औषध नहीं। चरक ने (सू० २५) यह भी कहा है कि समय पर भोजन करने से बढ़कर कोई आरोग्य कारक वस्तु नहीं। उसने यह भी कहा है कि अति मात्रा में भोजन करने से जितना 'आमविष' रक्त में बढ़ता है उतना और किसी कारण से नहीं बढ़ता। उसने यह भी कहा है कि भारी भोजन करने से जितना अजीर्ण होता है उतना और किसी कारण से नहीं होता। उसने यह भी कहा है—थोड़ी मात्रा में भोजन करने से जितना अग्निदीप्त होती है उतनी और किसी कारण से नहीं होती। उसने यह भी कहा है कि जो भोजन अपने को सात्म्य हो, उसी का सेवन करना चाहिये; जो अपने को सात्म्य न हो, उसका सेवन कभी न करना चाहिये। सुश्रुत ने (सू० २०) कहा है—'गव्यं घृतं सैन्धव दाडिमामलकमित्येषवर्गः पथ्यतमः'। अर्थात् गाय के दूध का घी, सैन्धव, अनार और आँवले का सेवन सबसे बड़ा पथ्य है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यायाम सम्बन्धी स्वस्थवृत्त

चरक ने (सू० ७) कहा है कि शरीर को आराम पसन्द न बनाके सचेष्ट रखना इष्ट है। शरीर को सचेष्ट रखने से शरीर का बल बढ़ता है। अंगों में स्थिरता, दृढ़ता का गुण आता है। शरीर में पित्त कर्म बढ़ने से शरीर हलका रहता है। कोई भारी काम आ पड़े तो उसे करने की सामर्थ्य रहती है। व्यायाम करने वाला कष्टों को आसानी से सह लेता है। व्यायाम से पाचकाग्नि प्रदीप्त रहती है, जिससे शरीरगत आमदोष भी पच जाते हैं। व्यायाम करने वाले के शरीर में चर्बी बढ़ती नहीं, शरीर भारी नहीं होता।

देखने में आता है कि ऊँचाई ५ फुट २ इञ्च हो तो भार ५३ किलो ग्राम के लगभग होना चाहिये। ऊँचाई ५ फुट ३ इञ्च हो तो भार ५६ किलोग्राम के लगभग होना चाहिये। ऊँचाई ५ फुट ४ इञ्च हो तो भार ५७-५८ किलोग्राम के लगभग होना चाहिये। ऊँचाई ५ फुट ५ इञ्च हो तो भार ६०-६२ किलोग्राम के लगभग होना चाहिये। भार इससे अधिक हो तो हलके व्यायाम से या २ मील के भ्रमण से उसे कम करना चाहिये।

सुश्रुत ने (चि० २४) कहा है कि शारीरिक श्रम करने को व्यायाम कहते हैं। व्यायाम से शरीर बनता है, पनपता है, अंग-अंग उभरते हैं, मुख पर कान्ति आती है, पाचक अग्नि प्रदीप्त होती है, शरीर हलका लगता है, आलस्य जाता रहता है, अंगों में स्थिरता-दृढ़ता आती है, शरीर जितना निरोग व्यायाम से रहता है उतना और किसी चीज से नहीं रहता, शरीर में चर्बी बढ़ गई हो तो उसे कम करने के लिये व्यायाम से बेहतर कोई उपाय नहीं, बुढ़ापा भी आकर व्यायाम-शील व्यक्ति को अधिक दबा नहीं पाता, व्यायाम करने वाले की प्रति-शक्ति इतनी तीव्र होती है कि उसे कोई रोग आक्रान्त नहीं कर पाता, व्यायाम करने वाले का चेहरा दर्शनीय रहता है, व्यायाम करने वाला

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि गलती से बिगड़ा हुआ भोजन भी कर ले तो वह उसे पच जाता है; और कोई दोष नहीं करता। व्यायाम से आदमी बलवान होता और बलवान को ही व्यायाम करने का अधिकार है।

जो अपना हित चाहता है, उसे रोज-रोज हर ऋतु में व्यायाम करना चाहिये। शीतकाल तथा वसन्त में अधिक, शेष ऋतुओं में कम। व्यायाम इतना करना चाहिये जिससे शरीर अधिक थके नहीं, श्वास-प्रश्वास अधिक तीव्र न हो।

भ्रमण करने के विषय में सुश्रुत ने कहा है कि बड़ी आयु वालों के लिये यह सर्वोत्तम व्यायाम है। भ्रमण से आयु, बल, मेधा, बुद्धि, पाचकाग्नि और इन्द्रियों की शक्ति बढ़ती है। सुश्रुत ने कहा है— 'ब्रह्मचर्योष्णोदक, निशास्वप्न व्यायामश्चैकान्ततः पथ्यतमाः' (सू० २०)। अर्थात् ब्रह्मचर्यकापालन, सदा गर्म जल पीना, रात्रि को ७ घण्टे निद्रा लेना और नित्य व्यायाम करने से बढ़कर दूसरा पथ्य नहीं।

एक या आधा घण्टा भी भ्रमण करने के बहुत गुण हैं। एक घण्टा भ्रमण करने से १५० कैलोरीज खर्च होती है। यदि कोई भारी व्यक्ति धीरे-धीरे एक घण्टा भ्रमण कर ले तो १ महीने में उसका एक किलोग्राम भार कम हो जाता है। भ्रमण से श्वास-संख्या बढ़ती है, प्रति मिनट ४० तक हो जाती है अर्थात् आदमी को अधिक आक्सिजन मिलती है जिससे फेफड़ों का लचकीलापन बना रहता है। नाड़ी संख्या कम होती है, धड़कन नहीं होती; शरीर की मांसपेशियों की शक्ति बढ़ती है। हृदय एक मांस है, उसकी भी शक्ति बढ़ती है। इस लिये सुश्रुत ने भ्रमण की जो प्रशंसा की है वह ठीक है।

काल सम्बन्धी स्वस्थवृत्त

वसन्त के महीनों में (फागण-चैत में) शरीर में कफ दोष बढ़ता है। अतः उस काल में भ्रमण उपयोगी है। अतिस्निग्ध, गुरु भोजन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्जित है। चने या जौ के आटे से मिश्रित गेहूँ के आटे की रोटी ठीक रहती है।

ग्रीष्म काल में अर्थात् ज्येष्ठ-आषाढ़ में कुछ वायु दोष की प्रबलता रहती है। वर्षा ऋतु में यह वायुदोष अधिक प्रबल हो जाता है। अतः उस ऋतु में घृत युक्त कुछ बल्य आहार करना चाहिये जो पचने में भारी न हों। इसके बाद आश्विन-कार्तिक की शरत् ऋतु में पित्त वृद्धि की आशंका रहती है। उसकाल में नीम आदि तिक्त औषधियों का या शास्त्रोक्त तिक्त घृत का सेवन कभी-कभी करते रहना चाहिये। सप्ताह में २ बार त्रिफला की घृत मिश्रित सब्जी भी लेनी चाहिये।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकरण – १२

कफपित्त वायुशामक द्रव्यों की सूची

कफशामक द्रव्य

मरिच, सोंठ, पिप्पली, पिप्पलामूल, अजवायन, जीरे दोनों, दालचीनी, इलायची, तेजपत्र, नागकेसर, राई, सौंफ, सोंया, तुलसी, वायबिडंग, बहेड़ा, आँवला, हरड़, भारंगी, चित्रमूल, वचा, हींग, कुटकी, अतीस, तालीशपत्र, स्वर्णगैरिक, शंख, शुक्ति, कपर्द, लौंग, जायफल, नीम, गिलो, सप्तपर्णत्वक्, इन्द्रजौ, गुग्गुलु, पित्तपापड़ा, चिरायता, पटोलपत्र, भृंगराज, खदिर, असन (विजयसार) टंकण, सारेक्षार, शिलाजीत, कट्फल, रास्ना, कर्चूर, मंजिष्ठा, आरग्वध, कुटज, दोनों कंटकारी, अर्जुन लोध्र, दोनों हल्दी, तक्र, सूरणकन्द, साँवक, कंगनी, कोदों, कुलथी, मेथी, ताम्बूल, करेला, गाजर, चना, जौ, मूँग, मोठ, पुराने चावल, लशुन, अदरक, सुपारी, बैगन, पौदीना, जामुन, उष्णपेय, पिप्पलीपक्व दूध, शारीरिक श्रम तथा गोमूत्र, मधु।

पित्तशामक द्रव्य

मोती, प्रवाल, शुक्ति, खर्पर, स्वर्णगेरू, ताम्र, दोनों चन्दन, उशीर, नीलोफर, पद्माक, सुगन्धवाला, मुलैठी, शीतल चीनी, मोथा, कुटकी, पित्तपापड़ा, दूर्वा, वासा, वट, गूलर, पीपल छाल, जातिपत्री, धमासा, खदिर, सारिवा, महुआ, लाक्षा, द्राक्षा, दाडिम, अर्जुन, खजूर, मंजिष्ठा, मोचरस, सतगिलो, आँवला, अशोक, वंशलोचन, चिरायता, लोध्र, छोटी इलायची, सुगन्धवाला, नीम, सप्तपर्ण, जीवन्ती, शता-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरी, बोल, धनियाँ, लसूढा, केला, खरबूजा, त्रिफला, मिश्री, त्रायमाण, शीतलपेय, द्राक्षापक्व शीतल दूध, विश्राम।

वायुरोग शामक द्रव्य

सुवर्ण, रजत, अभ्रक, लोह, मुक्ता, प्रवाल, मुक्ताशुक्ति, लशुन, केसर, कस्तूरी, हींग, कपूर, शुंठी, शतावरी, विधारा, शंखपुष्पी, बला, जीवन्ती, वराहीकन्द, विदारी, अश्वगंधा, अगर, तगर, जटामाँसी, कुष्ठ, पुष्करमूल, वचा, गुग्गुलु, सौंफ, अजवायन, विडंग, दालचीनी, नागकेसर, रास्ना, गुडूची, हल्दी, वंशलोचन, दारुहल्दी, माष, कट्फल, देवदारु, अनन्तमूल, हरीतकी, शृंगी, एरण्ड, ज्योतिष्मती, गोखरू, कुलथी, तैल, मद्य, गर्मपेय, ग्लूकोज मिश्रित देसी चाय, मधु मिश्रित गर्म घृत, गर्म द्राक्षाक्वाथ, गर्म देसी चाय, फलों के रस, मालिश।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(जयकृष्णदास आयुर्वेद ग्रन्थमाला ७)

04648

आयुर्वेद प्रवर्तक देवता

(An Authentic History of Founder Gods of Āyurveda)

लेखक—श्री रघुवीर शरण शर्मा वैद्य

इस छोटी सी पुस्तक के माध्यम से आयुर्वेद के विकास में देवताओं के अनुपम योगदान की कहानी सुन्दर, सरस शैली में प्रस्तुत की गयी है। प्रस्तुत पुस्तक में स्पष्ट रूप से समझाया गया है कि सोम औषधि क्या है? इसी प्रकार इन्द्रादि देवताओं से आयुर्वेद की शिक्षा का प्रसार भारतीय ऋषियों के बीच में किस रूप से हुआ इत्यादि बातों का विवरण प्राचीन ग्रन्थों के आधार पर किया गया है। इस में अनेक बहुमूल्य ज्ञातव्य जड़ी-बूटियों का भी उल्लेख किया गया है। मूल्य १२–००

गुरुकुल कांगड़ी पुस्तकालय

(जयकृष्णदास आयुर्वेद ग्रन्थमाला १३)

कुमार-तन्त्र-समुच्चय (कौमारभृत्यम्) (सचित्र)

(An illustrated treatise on care and diseases of children in Ayurveda)

लेखक—श्री रमानाथ द्विवेदी एवं श्री अशोक कुमार वर्मा

अष्टाङ्ग आयुर्वेद के अन्यतम अङ्गों में से 'कौमारभृत्यतन्त्र' एक अङ्ग है। इसी का अपर पर्याय 'बालचिकित्सा' है। इस ग्रन्थ में सोलह वर्ष की आयु वाले बालक-बालिकाओं के रोगों के शमन के उपचार समाविष्ट हैं।

कौमारभृत्यतन्त्र के सभी सूत्र मूलतः संस्कृत भाषा में हैं; अतः इन सूत्रों का भाषान्तर हिन्दी में सहज बोध शैली में सम्बद्ध कर दिया गया है। फिर आयुर्वेद साहित्य के जिन-जिन स्थलों से सूत्रों का सङ्कलन किया गया है, उनके सन्दर्भ स्थलों का निर्देश भी भलीभाँति किया गया है। समुच्चय के अन्तिम प्रकरण के रूप में बाल-भेषज-संग्रह नामक प्रकरण निबद्ध है।

इस प्रकार यह पुस्तक बालक की स्वास्थ्य परिचर्या, पोषण, रक्षण, रोग और उसकी चिकित्सा सम्बन्धी सभी ज्ञातव्य विषयों से सुसज्जित होकर प्राचीन कौमारतन्त्र की एक 'क्लासिकल' रचना के रूप में ग्रथित है। इस पुस्तक के नाम पर अब तक जितने भी संस्करण निकले हैं उनमें यह पुस्तक सर्वोत्कृष्ट है तथा मौलिक है। यह परीक्षोपयोगी, सन्दर्भोपयोगी तथा बालरोग-चिकित्सोपयोगी है।

श्री धर्मदत्त वैद्य संग्रह

मूल्य १०–००

प्राप्तिस्थान—चौखम्भा ओरियन्टालिया, पो० बा० नं० ३२, वाराणसी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R55,VAI-A
04648

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महत्त्वपूर्ण चिकित्सोपयोगी पुस्तकें —

१ आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास (सचित्र)। आचार्य प्रियव्रत शर्मा ५०-००
२ आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास (सचित्र)। संक्षिप्त संस्करण आचार्य प्रियव्रत शर्मा २५-००
३ समाज-चिकित्साशास्त्र (सचित्र)। डॉ० शिवनाथ खन्ना ३५-००
४ आयुर्वेदप्रवर्तक देवता। श्री रघुवीर शरण शर्मा वैद्य १२-००
५ आयुर्वेदीय अनुसन्धानपद्धति (सचित्र)। आचार्य प्रियव्रत शर्मा २०-००
६ शरीरक्रिया-विज्ञान। (नवीन संशोधित परि० संस्करण) हिन्दी-अंग्रेजी शब्दानुक्रमणिका तथा अनेक रेखा-चित्रों से सुसज्जित। श्री आचार्य प्रियव्रत शर्मा जी द्वारा संपादित ४५-००
७ भैषज्यकल्पना-विज्ञान। डॉ० अवध बिहारी अग्निहोत्री २०-००
८ रोग-परिचय। संशोधित चतुर्थ संस्करण। डॉ० शिवनाथ खन्ना ४५-००
९ रोगी-परीक्षा-विधि। प्राचीन आयुर्वेदिक तथा आधुनिक चिकित्सा-क्षेत्र में शय्याग्रस्त रोगी की परीक्षा तथा रोग से मुक्ति दिलाने की अनुपम विधि सरल सुबोध शैली में दी गई है। आचार्य प्रियव्रत शर्मा २५-००
१० अष्टाङ्ग संग्रह। शरीर स्थान हिन्दी व्याख्याकार पद्मधर झा सम्पादक आचार्य प्रियव्रत शर्मा २०-०० सूत्र स्थान ४०-००
११ भैषज्यरत्नावली। 'विद्योतिनी' हिन्दी व्याख्या तथा टिप्पणियों सहित, कविराज अम्बिकादत्त शास्त्री तथा पं० राजेश्वरदत्त शास्त्री संपादित। कपड़े की पक्की जिल्द ३५-००
१२ सुश्रुतसंहिता। आयुर्वेद 'तत्त्वसंदीपिका' हिन्दी व्याख्या सहित तथा महत्त्वपूर्ण टिप्पणियों से अलंकृत, कविराज अम्बिकादत्त शास्त्री सम्पादित। प्रथम भाग ५०-००, द्वितीय भाग ४०-०० सम्पूर्ण (१-२ भाग) ९०-००
१३ स्त्रीरोग-विज्ञान। (संशोधित चतुर्थ संस्करण) डॉ० रमानाथ द्विवेदी १५-००
१४ क्लिनिकल पैथोलॉजी। (बृहत् मल-मूत्र-कफ-रक्तादि परीक्षा)। डॉ० शिवनाथ खन्ना ३०-००
१५ योगरत्नमाला। सम्पादक प्रियव्रत शर्मा १०-००

प्राप्तिस्थान—चौखम्भा ओरियन्टालिया

पो० आ० चौखम्भा, पो० बा० नं० ३२

शाखा—बंगलो रोड, ९ यू० बी० जवाहर नगर, दिल्ली–११०००७

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri